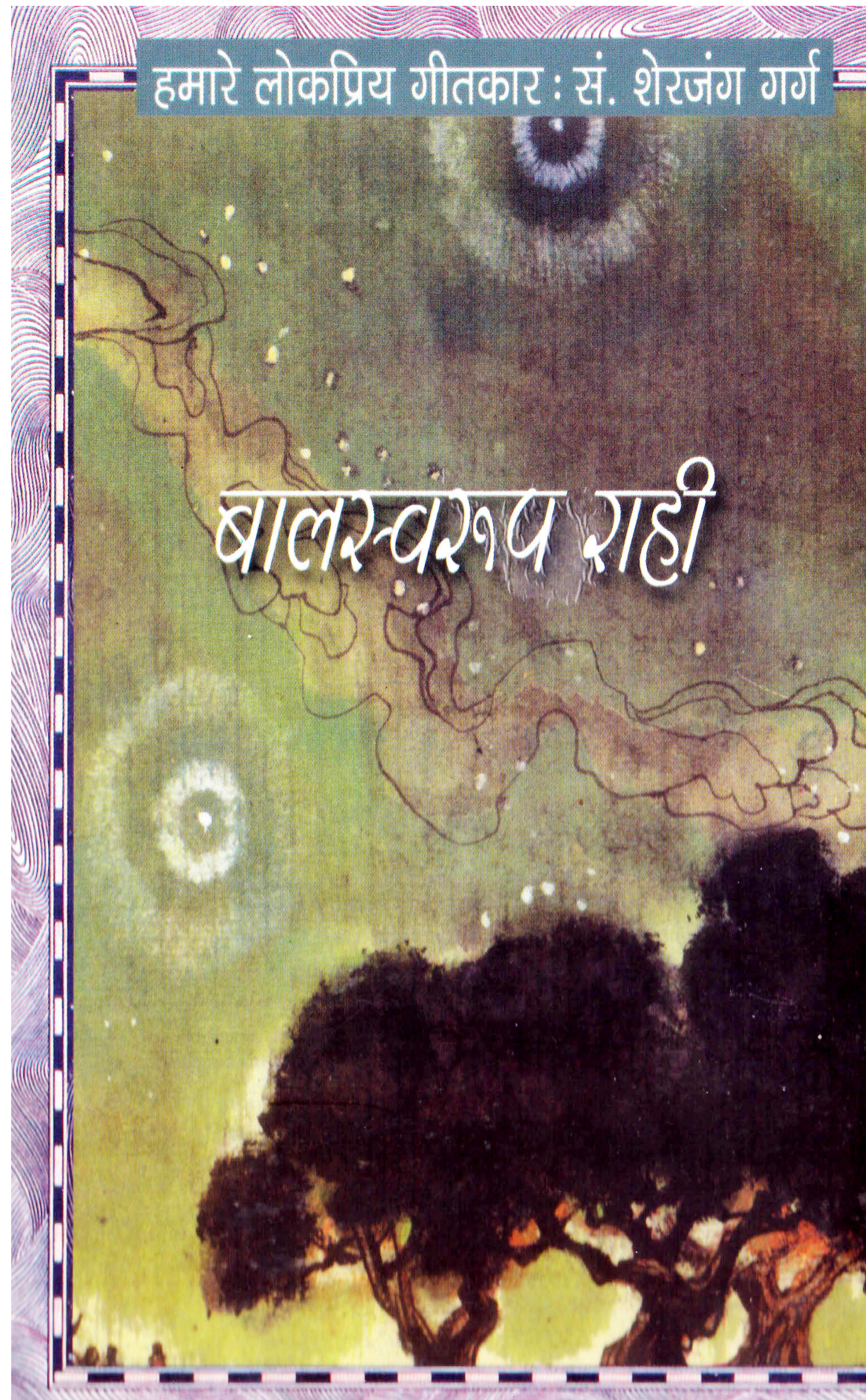

हमारे लोकप्रिय गीतकार : सं. शेरजंग गर्ग
बालस्वरूप राही

बालस्वरूप राही

हिंदी कविता में बालस्वरूप राही का नाम अपनी भाषायी सादगी, संवेदनात्मक संपन्नता एवं व्यक्ति से लेकर समष्टि तक व्याप्त सुकोमल आवेगों और तीखें तेवरों के कारण एक विशिष्ट स्थान का अधिकारी है। दिनकर, बच्चन, नेपाली, रंग की पीढ़ी के बाद के उल्लेखनीय हस्ताक्षर बालस्वरूप राही आधुनिक गीत के भी एक सशक्त हस्ताक्षर हैं। साहित्यिक पत्रकारिता और संपादन के क्षेत्र में अपनी ख़ास पहचान बनानेे वाले राही ने कविता को जनोन्मुख बनाने की दिशा में अपना संपूर्ण योगदान किया। उन्होंने कविता को मात्र कुछ बौद्धिकों के मानसिक व्यायाम का साधन नहीं समझा। यही कारण है कि राही के प्रशंसकों में समाज के प्रत्येक वर्ग के सुधीजन आसानी से मिल जाते हैं।

गीता को आधुनिक रंग देने, उसे महानगरीय ऊहापोह से जोड़ने का काम करने वाले बालस्वरूप राही ने उर्दू की लोकप्रिय प्रचलित शैलियों रुबाई, किता एवं ग़ज़ल में भी अपना कमाल दिखाया है और बेजोड़ लिखा है। उनका मुक्तछंद भावना मुक्त न होकर वर्जना मुक्त है। इसलिए सीधे प्रभावित करता है।

हमारे लोकप्रिय गीतकार

बालस्वरूप राही

सम्पादक

शेरजंग गर्ग



वाणी प्रकाशन



वाणी प्रकाशन
4695, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली 110 002

शाखा
अशोक राजपथ, पटना 800 004

फ़ोन: +91 11 23273167 फ़ैक्स: +91 11 23275710

www.vaniprakashan.in
vaniprakashan@gmail.com
editorial@vaniprakashan.com
sales@vaniprakashan.in

HAMARE LOKPRIYA GEETKAR : BALSWAROOP RAHI
edited by Sherjung Garg

ISBN : 81-7055-958-6
Collection of Poems

संस्करण 2002
आवृत्ति 2016

मूल्य: ₹300

रजौरिया प्रिंटर्स, दिल्ली-110 093 में मुद्रित

वाणी प्रकाशन का लोगो मक़बूल फ़िदा हुसेन की कूची से

आधुनिक गीत का सशक्त हस्ताक्षर

एक ऐसे मित्र कवि के बारे में लिखना जो लगभग हमउम्र हो (राही मुझसे आयु में एक वर्ष तेरह दिन बड़े हैं) जितना आसान है, उससे भी अधिक मुश्किल है। हम दोनों लगभग एक ही तरह की कविताएँ लिखते रहे हैं। काव्य लेखन के शुरुआती दौर से ही हम एक दूसरे के परिचित-प्रशंसक रहे हैं, फिर धीरे-धीरे दोस्त बन गए। हमारे काव्य रुझान भी एक रहे। यहाँ तक कि हमारी बाल कविताएँ भी एक ही समय पुस्तकाकार छपीं। हज़ारों शामें हमने कॉफी हाउसों, साहित्यिक गोष्ठियों, कवि सम्मेलनों और दूरदर्शन तथा आकाशवाणी के कार्यक्रमों में साथ-साथ गुज़ारी हैं, अनेक चर्चाओं-परिचर्याओं में भाग लिया है, अपनी पसन्दगी- नापसन्दगी ज़ाहिर की है। हाँ, तो ऐसे समकालीन समवयस्क प्रतिभा सम्पन्न रचनाकार के बारे में लिखने में उसके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के सिरों को एक साथ पकड़ पाना सचमुच दिक्क़त तलब काम है। कुछ न कुछ छूट जाना स्वाभाविक है। यह ज़रूर है कि पिछले चार दशकों से मैं राही की रचनाधर्मिता के विभिन्न पक्षों का साक्षी रहा हूँ।

बालस्वरूप राही को कविता लिखने का शौक़ कैसे लगा, इसकी दास्तान भी बड़ी दिलचस्प है। बचपन से ही उसमें कुछ कर दिखाने की अदम्य लालसा थी। इस लालसा के तहत उसने चित्रकारी की, वाक् प्रतियोगिताओं में भाग लिया, भाषण दिए और सुरीला गाने में असमर्थ होते हुए भी गाने का अभ्यास किया। फिर कविता के बिन्दु पर आकर वह ठहर गया। परिवार में उर्दू का वातावरण था और उसने उर्दू के कुछ उपन्यास, तिलिस्मे होशरुबा और सरशार कृत 'फ़साना-ए-आज़ाद' जैसे भारी भरकम ग्रन्थ भी पढ़ डाले थे। शायरी की अनेक किताबें उसकी नज़रों से गुज़र चुकी थीं। परिवार में अन्त्याक्षरी (वेतवाज़ी) का खेल प्रायः चलता था, जिसमें उनके बड़े भाई और भाइयों के मित्र अश्आर सुनाया करते थे। तब तक राही वहाँ एक श्रोता के रूप में ही मौजूद हुआ करता था, मगर धीरे-धीरे उसकी याददाश्त के अश्आर में इज़ाफ़ा होता गया। जब शेर कम पड़ जाते, वह स्वयं नया शेर जोड़ लेता और उसे किसी बड़े शायर के नाम से सुना दिया करता। बस कविता गढ़ने और शेर कहने की लत उसे कुछ ऐसी ही स्थितियों में लग गईं। फिर तो यह लटका परीक्षाओं

में भी चल निकला। काव्य पंक्तियाँ खुदा जोड़ी और उन्हें किसी स्थापित-प्रतिष्ठित कवि, यथा निराला, प्रसाद, बच्चन के नाम से उद्धृत कर दिया। इस कला में मिली कामयाबी ने राही में अतिशय आत्मविश्वास जगा दिया और फिर धीरे-धीरे लेखन की शुरुआत हो गई।

स्वाधीनता प्राप्ति के समय राही सिर्फ सातवीं कक्षा का छात्र था। स्वतन्त्रता का स्वागत राही ने अपने अन्दाज़ में किया। उर्दू-फारसी पढ़ना छोड़ कर उसने हिन्दी-संस्कृत पढ़ना प्रारम्भ कर दिया। परिवार में इसका विरोध हुआ, मगर राही ने एक नहीं मानी। हिन्दी तो उसे धीरे-धीरे आ गई मगर गाड़ी संस्कृत पर आ कर अटक गई। बारह-तेरह वर्ष की आयु में जब वह सातवीं-आठवीं का छात्र था, उसने नज़्में और कविताएँ एक साथ लिखनी शुरु कर दीं। प्रारम्भ में कुछ मज़ाक भी उड़ा। कुछ व्यंग्य भी कसे गये, लेकिन उसने निःसंकोच भाव से यह क्रम जारी रखा। उन दिनों राही ने कुछ इस तरह की रचनाएँ लिखी थीं :

दिल लगी को दिल लगी समझा था शेखे नुक़्ताची
यूँ लगी दिल को कि सारी दिल लगी जाती रही
ज़िन्दगी 'राही' भी तुम थे, तुम ही जब जाते रहे
मौत क्यों आती नहीं जब ज़िन्दगी जाती रही।

इस समय राही पर जिन शायरों का प्रभाव पड़ा, उनमें ग़ालिब और इक़बाल प्रमुख थे, कवियों में दिनकर और बच्चन से वह सर्वाधिक प्रभावित हुआ। मीर, ग़ालिब, इक़बाल के अश्आर उसे परेशान करते थे, वह उनमें खोया रहता था। इन्हीं दिनों बच्चन की 'हालाहल' उसके देखने में आई और राही 'हालाहल' में इतना डूबा कि उसके अनुकरण पर एक पूरी कविता पुस्तक रच डाली, जिसे वह 'अमृत और विष' के नाम से छपवाने का इच्छुक था, मगर लापरवाही में पांडुलिपि न जाने कहाँ खो गई।

मगर इसके बाद राही ने अपनी काव्य साधना जारी रखी और निरन्तर लिखा उर्दू के पारम्परिक छन्दों यथा रुबाईं, क़िता और ग़ज़ल के प्रति रुझान स्पष्ट था ही, क्योंकि वह उर्दू शायरी के प्रति पूर्णतः आसक्त रहा है। उर्दू के तर्ज़ेबयाँ को वह उसकी निधि मानता है। इसीलिए विषय और वैविध्य की दृष्टि से पूर्णतः सम्पन्न-समृद्ध हिन्दी कविता को उसने रचाव और रवानगी का सहारा लेकर और अधिक ऊर्जावान तथा प्रभावशाली बनाने का उद्यम किया है। कुछ उदाहरण पर्याप्त होंगे :

तुमको मालूम नहीं द्वार से हर शायर के
रोशनी आँख बचाकर ही गुज़र जाती है
उसकी दुनिया है अँधेरे से भरी उतनी ही
दूर से जितनी चमकदार नज़र आती है

खुदकुशी से भी बुरी है ये ज़िन्दगी अपनी
ख़ाक जीना है कि मरने को तरसते हैं हम
यो तो शायर हैं शहंशाह का दिल रखते हैं
असलियत ये है कि मिट्टी से भी सस्ते हैं हम

× × ×

आह वे नीम के घने साये
छिप के हम रोज़ जहाँ मिलते थे
देख मुझको तुम्हारी आँखों में
कैसे ताज़ा गुलाब खिलते थे

बालस्वरूप 'राही' दिल्ली विश्वविद्यालय में शिक्षा ग्रहण के दौरान अपनी कविताओं के रोमानी अन्दाज़, मानवीय सरोकारों के लिए तो जाने ही गए, उन्हें डॉ. नगेन्द्र के प्रतिभावान शिष्यों की श्रेणी में भी रखा गया। और यह वह समय था जबकि डॉ. नगेन्द्र की दिल्ली विश्वविद्यालय ही नहीं, अपितु देश के समस्त विश्व विद्यालयों में तूती बोलती थी। उस ज़माने में लखनऊ, वाराणसी, इलाहाबाद, कानपुर आदि नगरों से हिन्दी के प्राध्यापक धड़ाधड़ नियुक्तियाँ पा रहे थे और यह समझा जाने लगा था कि हिन्दी विभाग में दिल्ली के लोगों के लिए कोई ख़ास जगह नहीं रह गई है, क्योंकि वहाँ प्रतिभाशून्यता का प्रकोप है। ऐसे माहौल में भी प्रख्यात कवि भारत भूषण आग्रवाल ने एक साप्ताहिक में अपनी होली की उपाधियों में बालस्वरूप राही को 'डॉ. नगेन्द्र के सर्वश्रेष्ठ निबन्ध' की संज्ञा दी थी। कहने का अभिप्राय यही है कि राही को प्रतिभावान, लोकप्रिय और उत्कृष्ट मानने में किसी को गुरेज़ नहीं था।

बालस्वरूप राही हिन्दी के उन कवियों में हैं जो अपनी क़लम, अन्दाज़े बयाँ, रचना शैली, कथ्य और संवेदना के कारण तथा अपने प्रभावशाली काव्य पाठ की वज़ह से कविता के प्रत्येक स्कूल की विशेषताएँ समाए रखने के बावजूद कुछ अलग ही क़िस्म के रचनाकार माने जाते हैं। उनकी कविताओं, गीतों, नज़्मों और ग़ज़लों में उर्दू का सलोनापन और रंग है तो संस्कारित हिन्दी की सुगन्ध भी, परम्परा के प्रति सहज आत्मीय भाव है तो प्रयोग को भी उन्होंने अपनी रचनाओं में बख़ूबी अपनाया है, यद्यपि वह रूढ़ किस्म के प्रयोगवादी नहीं हैं। उनमें काव्य की धीर-गम्भीर चेतना और ऊर्जा है तो विनोद वक्रता की भंगिमा को भी उन्होंने दर किनार नहीं किया है। वह गीतकार हैं, पर सस्वर काव्यपाठ नहीं करते हैं, वह प्रयोगशील हैं फिर भी उनकी कविताएँ कवि सम्मेलनों में सराही जाती हैं। हिन्दी उर्दू या किसी अन्य भाषा में ऐसी समस्त विशिष्टताओं से लैस कवियों-शायरों की गणना शायद उंगलियों

पर की जा सकती है। मगर राही ऐसे ही कवियों में एक है।

अपनी रचनाओं-चाहे उर्दू अन्दाज़ में कही गईं, रूबाइयाँ अथवा ग़ज़लें हों, चाहे 'मृत शिशु के जन्म पर' अथवा 'अजन्ता की कलाकृतियों के नाम' जैसी लम्बी कविताएँ हों या टटके आधुनिकबोध से युक्त और भावप्रवण प्रेम गीतों के माध्यम से अर्जित लोकप्रियता से राही सन्तुष्ट होकर नहीं रह गया। अपने एक लेख में राही द्वारा नई भावभूमि को अपनाने के सन्दर्भ में इन पंक्तियों के लेखक ने लिखा था–"राही ने लोकप्रिय कविता को एक सीमा तक छोड़ दिया" मगर उसके सामने आने वाली चुनौतियाँ समाप्त नहीं हुईं। उसके दिमाग में कविता की प्राचीन तथा अतिरूढ़ मान्यताओं के प्रति विद्रोह की भावना थी, मगर इस क़दर नहीं कि कविता अपना सम्पूर्ण परम्परागत रूप त्याग कर नयी कविता अथवा अकविता हो जाये। उसमें बदलते जीवन, परिवेश और मान्यताओं को आत्मसात करते हुए कविता को ऐसा रूप देने की वांछा थी, जो रूढ़ कविता से भिन्न तो हो, मगर अत्याधुनिकता के प्रपंच को भी अस्वीकार कर दे। उसमें रूढ़ छन्दों, लयात्मकता, संवेदनशीलता के प्रति आग्रह होते हुए भी, इन्हीं काव्य गुणों को नया संस्कार देने की चाह थी। इसी वांछा के परिणामस्वरूप उसने स्वयं को अपने अतीत से काटकर जटिल जीवन की ऊहापोह का साक्षात्कार करते हुए, उसे अंगीकार करते हुए बहुत से 'नए' गीत लिखे, इन्हें राही ने स्वयं आधुनिक गीत की संज्ञा दी। 'जो नितान्त मेरी हैं' में इसी मनोभूमि एवं संवेदना के गीत संकलित हैं–जिनमें घुँघुवाते शहर हैं, साँवली दोपहरे हैं, घुँघलाते साये है, कुम्हलाये ख़्वाब हैं तथा जहाँ आत्महत्याएँ वर्जित हैं, मगर मृत जीवन कानूनी है। इन गीतों में कुल मिलाकर एक अन्तरंग तल्ख़ी, बेचैनी, आक्रोश और विद्रोह है। इन गीतों में वह पीड़ा और नैराश्य है जो कवि को स्वयं को टटोलने और अपनी विफलताओं का रहस्य खोलने के लिए विवश करता है। उदाहरण के तौर पर कुछ पंक्तियाँ यों हैं :

घिस गए सभी मंसूबे इस जीवन के
दफ़्तर की सीढ़ी चलते और उतरते
× × ×
जो काम किया वह काम नहीं आयेगा
इतिहास हमारा नाम न दुहरायेगा
जब से सपनों को बेच खरीदी सुविधा
तब से ही मन में बनी हुई है दुविधा
हम भी कुछ अनगढ़ता तराश सकते थे
दो-चार साल समझौता अगर न करते

अथवा

धीरे-धीरे टूट किसी को कानों-कान ख़बर न लगे
यहाँ आत्महत्याएँ वर्जित मृत जीवन कानूनी है।

राही ने अपने आधुनिक गीतों में दिशाहीनता से ग्रस्त और नई सभ्यता से मस्त नई दिशाओं की खोज को उत्सुक युवा वर्ग की संशयग्रस्त मानसिकता को व्यक्त किया है।

राही के लगभग समकालीन वरिष्ठ गीतकार रामावतार त्यागी ने उनकी रचनाओं पर विचार करते समय लिखा था–"कविता की महानता की दो कसौटियाँ होती हैं। एक तो यह कि जो कथ्य है वह कितना अधिक व्यापक है, दूसरी यह कि कथ्य को किन शब्दों के माध्यम से व्यक्त किया गया है, उनमें उसे समेटने की कितनी सामर्थ्य है। राही जी की कविताएँ इन दोनों कसौटियों पर खरे कुन्दन-सी उतरती हैं।"

'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', फिर 'प्रोब इंडिया' और उसके बाद 'भारतीय ज्ञानपीठ' की सम्मानजनक नौकरियाँ छोड़ देने के उपरान्त राही की ज़िन्दगी में ऐसा वक़्त आया जब उसे व्यापक संघर्ष, दुश्वारियों और पीड़ाओं से दो-चार होना पड़ा। इस काल में उसकी बची खुची रोमानियत ने कटु यथार्थ को व्यक्त करने वाली तेज़तर्रार भाषा ने ल ली। उसके सोच में तल्ख़ी और लेखन में प्रहारात्मकता के दर्शन होने लगे। राही ने इस समय एक-से-एक प्रभावशाली करुण एवं मार्मिक व्यंग्य युक्त ग़ज़लें कहीं। यथा 'किस मुहूरत में दिन निकलता है, शाम तक सिर्फ हाथ मलता है।' 'एक धागे का साथ देने को मोम का रोम-रोम गलता है' अथवा 'डूबने वालों की फहरिश्ता में भी नाम न हो, मेरे जैसा किसी तैराक का अंजाम न हों आदि आदि। ज़ाहिर है राही की ये ग़ज़लें ग़ज़ल के शेर में एक नया आयाम लेकर उपस्थित हुईं।

इसी काल में उसने एक ग़ज़ल कही, जिसकी प्रारम्भिक पंक्तियाँ कुछ यों थीं :

हम पर दुख का परबत टूटा, तब हमने दो चार कहे
उस पे भला क्या बीती होगी जिसने शेर हज़ार कहे

इस ग़ज़ल में राही का इशारा ग़ज़ल कहने की कठिनाइयों के साथ-साथ इस ओर भी था कि एक कालजयी ग़ज़ल कहने के लिए शायर को अनेक मानसिक पीड़ाओं से गुज़रना पड़ता है; दर्द, तकलीफ़ घुटन की राह से गुज़र कर ही कुछ यादगार अरआर कहे जा सकते हैं। तभी एक मनचले ने उक्त पंक्तियों को हल्का-सा तोड़-मरोड़ कर कुछ यों कर दिया :

हम पर दुख का परबत टूटा तब हमने दो चार सुने
उस पे भला क्या बीती होगी जिसने शेर हज़ार सुने

राही ने उक्त पंक्तियों का भी भरपूर मज़ा लिया और इसके कथ्य को उन शायर कवियों की ओर उछाल दिया जो बेवज़ह शेर कहते हैं और ढेरों शेर कहते हैं। कहते चले जाते हैं—बिना अनुभूतियों के ताप के। राही की ग़ज़लों की यह विशेषता रही है कि उसने अपनी ग़ज़लों में क़ाफ़िये का इस्तेमाल मात्र इस्तेमाल के लिए नहीं किया।

आपातकाल के दौरान दुष्यन्त ने अत्यन्त मारक, प्रहारक और युगीन तड़प को वाणी देने वाली ग़ज़ले कहीं थीं और उनका प्रकाशन प्रायः कमलेश्वर द्वारा संपादित कथा पत्रिका 'सारिका' में हुआ करता था। कथा पत्रिका में ग़ज़लों का प्रकाशन तब यार लोगों को असंगत लगता था, मगर 'सारिका' ने तत्कालीन श्रेष्ठ ग़ज़ल लेखन को भी मुख्य धारा में शामिल कर दिखाया था। 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के सम्पादक मनोहर श्याम जोशी को यह नागवार लगता था कि दुष्यन्त की ग़ज़लें उनके पत्र में न छपें। तभी 'सारिका' में दुष्यन्त की यह ग़ज़ल आई :

इस नदी की धार में ठंडी हवा आती तो है
नाव जर्जर ही सही लहरों से टकराती तो है
एक चिंगारी कहीं से ढूँढ लाओ दोस्तों
इस दिए में तेल से भीगी हुई बाती तो है।

और तभी 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' कार्यालय में जोशी जी की अध्यक्षता में दुष्यन्त की ग़ज़लें साप्ताहिक में मंगाने की योजना बनी। राही ने इसी ज़मीन पर पंक्तियाँ जोड़ी और दुष्यन्त को भेज दी :

हमने यह माना ग़ज़ल कहनी तुम्हें आती तो है
'सारिका' में ही सही ऐ दोस्त छप जाती तो है

इन पंक्तियों का सीधा असर हुआ। दुष्यन्त ने शीघ्र ही अपनी ग़ज़लें साप्ताहिक के लिए भिजवा दीं।

राही के काव्य विषय यों तो बहुत सीमित लगते हैं, मगर देखा जाए तो इन सीमित गिने चुने विषयों में व्यापकता की कमी नहीं है। राही ने मानक अनुभूति तथा मानक संघर्ष को काव्य का प्रमुख विषय माना है। और सच पूछा जाए तो इन दो विषयों में विश्व का कौन-सा विषय नहीं समा जाता। उसकी समस्त रचनाओं में मनुष्य अपने सर्वश्रेष्ठ रूप में मौजूद मिलता है। चाहे प्रेमानुभूतियाँ हों अथवा अन्य मानवीय अनुभूतियाँ हों। वह प्रचारात्मकता से दूर रहा है : और उसने प्रयोग भी बहुत सीमित मात्रा में किए हैं। छन्दहीन लिखते हुए भी उसने लयात्मकता और करुण संवेदनाओं का दामन नहीं छोड़ा है। 'चाहे मृत शिशु के जन्म पर' हो अथवा 'अजन्ता' जैसी कविता, राही का कवि अपनी सम्पूर्णता के साथ सामने आता है।

उसकी अनेक पंक्तियाँ काव्य रसिकों की स्मृतियों में दर्ज हैं और ऐसी ही पंक्तियों के कारण राही अपने समय के प्रमुख कवि के रूप में अपनी उपस्थित दर्ज किए हुए हैं :

तुम्हें देख लेता हूँ जब-जब भी ऐसा लगता है
जैसे दर्पण में अपना ही रूप निहार रहा हूँ
हाथ तुम्हारा कभी छू लिया तो आभास हुआ यह
दायें कर में मैंने बायें कर को थाम लिया है,
सोया गोद तुम्हारी, मन में बता मगर आई यह
धर कर शीश बाँह पर अपनी ही आराम किया है
मेंहदी रचे हाथ से जब तुम हाथ थपथपाती हो
लगता है मैं ही ये अपना नाम पुकार रहा हूँ

× × ×

तुम्हीं न समझी जब मेरे गीतों की भाषा
दुनिया सौ-सौ अर्थ लगाये क्या होता है

× × ×

मरण के यहाँ प्राण गिरवी रखे हैं,
बची देह थी धूल के नाम कर दी
कभी चाल चलना न आया हमें ही
बिना बात शतरंज बदनाम कर दी

× × ×

जिनको ठुकरा देती दुनिया वे आ जाते द्वार तुम्हारे
मैं ठुकराया हुआ तुम्हारा जाऊँ किसके द्वार, बताऊँ!

पाप हमारे किए तिरस्कृत, केवल निर्मल पुण्य सराहा,
जिस ने भी इस भरे जगत में, चाहा हमें, अधूरा चाहा।

साठ के दशक में राही के काव्य संकलन की भूमिका लिखते समय बच्चनजी ने राही की रचनाओं में उर्दू के प्रति विशेष झुकाव और उनकी ग़ज़लों के प्रसंग में टिप्पणी करते हुए लिखा था कि राही को उर्दू के प्रयोगों से बचना चाहिए क्योंकि हिन्दी का जन्म उन कथ्यों को बयान करने के लिए हुआ है जिनका स्पर्श उर्दू में नहीं हो सकता है। फिर भी राही ने यह क्रम जारी रखा। इतना ही नहीं, उनसे किंचित पूर्ववर्ती शंभूनाथ शेष, बलवीर सिंह रंग, हरकिृष्ण प्रेमी ने इस क्रम को जारी रखकर बेहतरीन ग़ज़लें कहीं।

आज से क़रीब पच्चीस वर्ष पूर्व मैंने मासिक पत्रिका 'दिल्ली' में बालस्वरूप राही के सम्बन्ध में लिखा था—"कविता के विविध रूपों यथा रुबाई, ग़ज़ल के प्रति आसक्ति के साथ-साथ राही का सबसे बड़ा शौक़ सुरुचिपूर्ण ढंग से जीवन जीना है। यही कारण है कि उसे नए-से-नए डिज़ाइन की बुश्शर्टें पहनने और क़तई अलग ढंग की बुनावट के सूट पहनने में ताज़गी महसूस होती है। अच्छे-से-अच्छा दिखने और अच्छे-से अच्छा लिखने की कामना राही की हॉबी है। यही कारण है कि मित्र मंडली (उस समय के ख़ास मित्र थे—रामावतार त्यागी, सुरेन्द्र कुमार मल्होत्रा, रामकिशोर द्विवेदी और भूपेन्द्र कुमार स्नेही) में राही सम्बन्धी यह लतीफ़ा काफ़ी मौज मस्ती के मूड में बयान किया जाता है।

"एक दिन राही को सभी लोगों ने उदास देखा। दफ़्तर पहुँचते ही उन्होंने कोई काग़ज़ इधर फेंका, कोई उधर। सीधे मुँह किसी से बात नहीं की। सिगरेट भी कोटे से कुछ ज़्यादा फूँक गए। दोस्तों की चिन्ता और दिलचस्पी दोनों साथ-साथ बढ़े-आख़िर माजरा क्या है? बड़ी मुश्किल से रहस्योद्‌घाटन हुआ। मालूम हुआ कि आज राही ने बस में किसी महाशय को अपने से बढ़िया बुश्शर्ट पहने हुए देख लिया था।

आख़िरी बात और! पद्य में पटुता प्रमाणित करने वाले राही ने गद्य भी उच्चकोटि का लिखा है। इस कसौटी पर खरा उतरने का काम 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में प्रकाशित होने वाले स्तम्भ गपशप के माध्यम से दिया गया। यह 'गपशप' शाही के नाम से छपती थी। 'शी' यानी मनोहरश्याम जोशी और 'ही' अर्थात् राही। दोनों ने संयुक्त रूप से यह स्तम्भ लिखकर हिन्दी गद्य को नई भंगिमा देने का प्रयास किया था। 'गपशप' में समसामयिक साहित्य, घटनाओं, सरोकारों पर जीवन्त टिप्पणियाँ मंझे हुए गद्य का नमूना पेश करती थीं।

बाल स्वरूप राही के बारे में फिलहाल इतना ही।

—शेरजंग गर्ग

कविता क्रम

मुक्तक और ग़ज़लें

दिल को थामे हुए	29
हुस्न को बेनक़ाब देखा है	30
हुस्न ये लाजवाब	31
दिन गुज़रता नहीं	32
दिल की हर आरज़ू	33
कोई वादा कोई क़सम	34
किस मुहूरत में	36
इतना बुरा तो	38
जहाँ मैं हूँ	39
डूबने वालों की फ़ेहरिश्त में	40
यह महके जिस्म	42
हम पर दुख का परबत टूटा	43

गीत

पलकें बिछाए तो नहीं बैठी	47
गीतों की भाषा	48
बात बिरानी हो जाती है	49
भर दिया जाम	50
नज़र न लग जाए	51
श्याम रंग में रंगी चुनरिया	53
ओ कारे कजरारे बादल	55
फिर कोई	57
देख लिया है तुम्हें	58
तुम न बुझाना दीप	60

रूप निहार रहा हूँ 63
मेरा रूप तुम्हारा दर्पण 65
जाऊँ किसके द्वार 67
जीवन तो संयोग मात्र है 69
मीत तुम जगते रहना 71
यह कैसे हुआ मीत 72
उमर एक बीती 74
गीत और मैं 77
सहज भाव से प्यार करो 79
गत और आगत 81
दर्द का स्वागत 83
गीत नया जन्मा 85
सभ्यता नई भाष सीख रही 87
जो नितान्त मेरी हैं 89
भीड़ से अलग 91
कस्तूरी मृग का आत्मकथ्य 92
अमसमर्पितों का गीत 93
बादलों घिरी एक भोर : तीन सम्बोधन 94
सभी दिशाएँ सूनी हैं 96
इस तरह तो 97
गज़रे का एक फूल 98
लावे की नदी 100
शाम को उदासी और विदा 102
शाम और निरन्तर मैं 103
अधूरी समाप्तियाँ 105
जीवन क्रम 107
विकल्प 109
पी जा हर अपमान 110
टूट गये सभी वहम 111
यह मुझको क्या हुआ 113
आवाज़ वे देते रहे 115

लम्बी कविताएँ

मृत शिशु के जन्म पर 119
अजन्ता की कलाकृतियों के नाम 123

द्वाभा

सरगोशियाँ 131
प्यार धनवान है उदार नहीं 132
ये चिराग़ तेरे हैं 133
कवि का प्रेमिका के नाम 135
प्रेमिका का पत्र कवि के नाम 138
भूख के धान 141

मुक्तक और ग़ज़लें

दर्द को दिल में आसरा देकर
सारे अरमान हो गए बेघर
ये तो ऐसा ही कुछ हुआ जैसे
फूँक दे घर कोई दिया लेकर।

दर्द के हाथ बिक गईं खुशियाँ
और हम बेच कर बहुत रोए
जैसे कोई दिया बुझा तो दे
किन्तु फिर रात भर नहीं सोए।

हसरतों की ज़हर बुझी लौ में
मोम-सा दिल गला दिया मैंने
कौन बिजली की धमकियाँ सहता
आशियाँ खुद जला दिया मैंने।

जानता हूँ कि गैर हैं सपने
और खुशियाँ सभी अधूरी हैं
किन्तु जीवन गुजारने के लिए
कुल गलतफहमियाँ जरूरी हैं।

मेरे आँसू तो किसी सीप में मोती न बने
साथ मेरे न कभी आँख किसी की रोई
ज़िन्दगी दर्द है, इसकी न शिकायत है मुझे
ग़म तो इसका है कि हमदर्द नहीं है कोई।

देखने को ये करिश्मा न मिला दोबारा
भूल कर भी न किया उसने गिला दोबारा
गूँथ जो मैंने दिया उसको तेरे जूड़े में
डाल से टूटा हुआ फूल खिला दोबारा।

डूबते को किसी तिनके का सहारा देना
दिल बहा जाए है धारा में किनारा देना
'कोई करता है तुम्हें प्यार न जाने कब से,
जा के दर्पण को ये सन्देश हमारा देना।

बन के सूरज की किरण मुझ को कमल जैसा खिला
हाँ मैं प्यासा हूँ मगर मुझ को तरीक़े से पिला
मैंने माना कि लबालब है तेरे ज़िस्म का जाम
इस में दो बूँद मगर प्यार से अमृत तो मिला।

ये तो सह लेंगे कि वादा न निभाए कोई
पास हो के न हमें पास बुलाए कोई
सब सहेंगे, ये मगर ग़म न सहा जाएगा
चाँदनी रात हो और याद न आए कोई।

आप आए हैं तो बैठें, ज़रा आराम करें
सिलसिला बात का चलता है जो चल पड़ता है
आप की याद में खोया हूँ अभी चुप रहिए
बात करने से ख्यालों में ख़लल पड़ता है।

प्यार की आग का व्यवहार कभी कर देखो,
दर्द के बाग़ का सिंगार कभी कर देखो,
चाँदनी के सुमधुर रूप पे मरने वालो,
चाँद के दाग़ को भी प्यार कभी कर देखो!

फूल के रूप से हर दिल ने सदा प्यार किया,
है मगर कौन कि जो फूल का जीवन हो जिया,
दोहपर शूल की छाती पे सिसकते गुज़री
शाम आई तो कफ़न धूल-भरा ओढ़ लिया।

प्यार की मौत है ये, मिलना-मिलाना कैसा,
रोज़-की-रोज़ मेरे घर पे ये आना कैसा,
मेरा प्याला मुझे ख़ाली ही थमा कर बोले—
ज़िन्दगी प्यास है फिर पीना-पिलाना कैसा?

रात-भर जग के तेरा इन्तज़ार कौन करे,
झूठी उम्मीद पे दिल बेक़रार कौन करे,
तेरी उलफ़त पे तो मुझ को यक़ीन पूरा है,
तेरे वादों का मगर ऐतबार कौन करे?

चाहिए कब दोस्त या हमदम नए,
जख़्मे-दिल के वास्ते मरहम नए,
गीत गाने, मुस्कराने के लिए
माँगती है ज़िन्दगी कुछ ग़म नए।

क्या ग़ज़ब के दोस्त तुम सैयाद हो,
लूट कर गुलशन हमारा शाद हो,
ख़ूब की हमपर इनायत आपने
पर कतर कर कह दिया—आज़ाद हो।

कल सुबह मृदु कल्पना लुट जाएगी,
रूप की बदली बरस छट जाएगी,
स्वप्न कब किसके हुए, है ज्ञात, पर
इस बहाने रात तो कट जाएगी।

प्यार इन्सान को इन्सान बना देता है,
उम्र की राह को आसान बना देता है,
हो मुहब्बत तो न रख मेरी ख़ताओं पे नज़र,
प्यार पत्थर को भी भगवान बना देता है।

ऐसे बहके कि अचानक ही डगर भूल गए,
जाना था कौन दिशा, कौन नगर भूल गए,
प्यार की रात की कुछ ऐसी सुबह आई है
ख़्वाब तो याद है, ताबीर मगर भूल गए।

तू जो आई तो बहारों पे बहार आई है,
रूप की धूप सभी फूल निखार आई है,
चीर कर वक्ष कुहासे का सवेरा उभरा,
तू जो बिखरी हुई अलकों को संवार आई है।

रात चुपचाप है पर चाँद तो ख़ामोश नहीं,
कैसे कह दूँ कि खुदा आज फ़रामोश नहीं,
ऐसा डूबा हूँ तेरी आँखों की गहराई में
हाथ में जाम है, पीने का मगर होश नहीं।

इन चमकदार क़तारों पे नज़र रखती हूँ,
सुर्ख़, बेदाग़ अंगारों पे नज़र रखती हूँ,
दे के मिट्टी के खिलौने मुझे बहकाओ न तुम,
मैं जवानी हूँ, सितारों पे नज़र रखती हूँ।

जो भी होता है आप होता है
आदमी की बिसात कुछ भी नहीं।
मैं जो अकसर उदास रहता हूँ,
बात ये है कि बात कुछ भी नहीं।

जिसके जीने से जी रहे थे हम,
दर्द का दम निकल गया शायद!
एक मुद्दत में नींद आई है,
मौत का दिल पिघल गया शायद!

वो तो बेताब ये सुनें, लेकिन
हम में ही थी न ताब कहने की।
सारी ख़ुशियों पे छाई जाती है,
एक आदत उदास रहने की।

दूर तक एक भी आता है मुसाफ़िर न नज़र,
ये भी मालूम नहीं, रात है ये या कि सहर,
मेरे अस्तित्व के बस दो ही चिह्न बाक़ी हैं,
एक बुझता-सा दिया, एक उजड़ी-सी क़बर।

बैठे-बैठे ही कभी दर्द हुआ करता है,
कौन दुखता हुआ उर-घाव छुआ करता है,
वो मेरा दोस्त नहीं, सबसे बड़ा दुश्मन है;
जो मेरे वास्ते जीने की दुआ करता है।

वादा करता है किनारे का, लहर देता है,
लाख ग़म, सुख का महज़ एक पहर देता है,
उम्र की राह कटी, तब ये कहीं राज़ खुला,
प्यार अमृत के बहाने ही ज़हर देता है।

रात आती है तेरी याद में कट जाती है,
आँख रह-रह के सितारों-सी डबडबाती है,
इतना बदनाम हो गया हूँ कि मेरे घर में,
आजकल नींद भी आते हुए शरमाती है।

ज़िन्दगी दर्द की तस्वीर नहीं बन सकती
मौत के हाथ की तहरीर नहीं बन सकती
चन्द बहके हुए खुदगर्ज़ दरिन्दों की हवस
लाखों इंसानों की तकदीर नहीं बन सकती।

आज बदली है जमाने ने नई ही करवट
नई धारा ने विचारों का छुआ है युग-तट
तुम जिसे मौत की आवाज़ समझ बैठे हो
नए इन्सान के कदमों की है बढ़ती आहट।

फिर किसी बुत से रस्मो-राह करें
फिर कहीं ज़िन्दगी तबाह करें
चार लम्हे तो दिल बहल जाए
आइए, फिर कोई गुनाह करें।

ये तो नहीं कि मुझको कोई और काम था
ये भी नहीं कि मेरा इरादा बदल गया
इतना तेरे ख़याल में खोया हुआ था मैं
तेरे ही घर के सामने होकर निकल गया।

साँस आती है तो मरने का गुमां होता है
फिर भी मालूम नहीं दर्द कहाँ होता है
मेरे सीने में भी चाहें हैं कई लेकिन यों
जिस तरह बन्द इमारत में धुआँ होता है।

मैं जो रोया तो फूल खिल न सके
दर्द दुनिया का हो न पाया कम
मेरे आँसू न बन सके मोती
मेरे आँसू न बन सके शबनम।

ग़म ने जो ख़्वाब परेशान किए हैं मेरे
वे किसी गीत के हाथों से संवर जाएँगे
प्यार में डूबे हुए रोज़ न रह पाए अगर
ये मुसीबत से भरे दिन भी गुज़र जाएँगे।

राह के मोड़ घुमावों की तरफ मत देखो
मेरे रिसते हुए घावों की तरफ मत देखो
मेरे विश्वास की बाहों का सहारा लो तुम
मेरे हारे हुए पाँवों की तरफ मत देखो।

मेरा विश्वास पराजय को ज़हर होता है
मेरा उल्लास उदासी को क़हर होता है
मुझे घिरते हुए अंधियारे की परवा क्या है
मेरी हर बात का अंज़ाम सहर होता है।

दिल को थामे हुए यों बेक़रार बैठे हैं,
ऐसा लगता है कोई दांव हार बैठे हैं!

इनसे कह दो के किसी और को जा कर छेड़ें,
हमको घेरे हुए जो गमगुसार बैठे हैं!

एक भी चाँद तुम्हें अपने साथ ला न सका,
हम तो हर रात की जुल्फ़ें संवार बैठे हैं।

तुम न गुज़रोगे इधर से ये सही है, लेकिन
तुमने करने को कहा इन्तज़ार, बैठे हैं।

ये ज़रूरी तो नहीं है के कोई राज़ ही हो,
आज मौसम है ज़रा खुशगवार, बैठे हैं।

एकटक देखे से आँखों में जो आया पानी,
सोच लेना न कहीं अश्कबार बैठे हैं।

मौत हर रोज़ तक़ाज़ा जो करे, वाज़िब है,
हम भी खाए हुए कब का उधार बैठे हैं।

हम तो 'राही' हैं घड़ी-भर में गुज़र जाएँगे,
आप भी किनका किए ऐतबार बैठे हैं।

हुस्न को बेनक़ाब[1] देखा है,
ज्यों खुली आँख ख़्वाब देखा है।

कैसा हैरानगी का आलम है,
फ़र्श पर माहताब[2] देखा है।

आप पहलू बदल के अंगड़ाए,
या कोई इंक़लाब देखा है?

आप दीखे तो ये लगा जैसे--
आरज़ू का शबाब देखा है!

चश्मे-नरगिस[3] में लाज के डोरे,
याकि जामे-शराब देखा है?

नाज़ किस बात पर तुझे है गुल[4],
हमने तेरा जवाब देखा है!

आशियाँ को क़फ़स[5] समझते हैं,
हम-सा ख़ाना-ख़राब[6] देखा है?

साथ काँटों के जो नहीं 'राही',
आज ऐसा गुलाब देखा है!

---

1. आवरणहीन 2. चाँद 3. नरगिसी आँख 4. फूल 5. पिंजरा 6. बेघरबार

हुस्न ये लाजवाब, क्या कहिए,
मात है माहताब क्या कहिए!

पानी-पानी है फूल नरगिस का,
तेरी आँखों की आब, क्या कहिए!

चम्पई शाम पर घटा काली,
तेरे रुख़ पर नक़ाब, क्या कहिए!

तू जो हँस दी तो कौंध कर टूटीं,
बिजलियाँ बेहिसाब, क्या कहिए!

तेरे ओठों पे ख़्वाहिशों की नमी,
ओस-भीगा गुलाब, क्या कहिए!

आँख दम-भर को ठहरती ही नहीं,
तेरा बाग़ी शबाब, क्या कहिए!

मेरे बेचैन बेक़रार सवाल,
तेरा गुमसुम जवाब, क्या कहिए!

मेरा ये आख़िरी गुनाह, तेरा
पहला-पहला सबाब, क्या कहिए!

आप की ये ग़ज़ल, जवाब नहीं,
वाह, 'राही' जनाब, क्या कहिए!

दिन गुज़रता नहीं गुज़ारे से,
हम भटकते हैं बेसहारे से।

जान हम पर कभी जो देते थे,
बात करते हैं अब इशारे से।

रात मेरी न हो सकी रोशन,
ग़म दहकते रहे अंगारे से।

इन बहारों का क्या करें हमदम,
फूल सुन्दर नहीं तुम्हारे से।

जिन को मंझधार से मुहब्बत थी,
लौट आए स्वयं किनारे से।

जान भी दी, दुआ भी देते हैं
होंगे प्रेमी कहाँ हमारे से!

ऐसी बिखरी हैं उम्र की ज़ुल्फ़ें,
अब संवरती नहीं संवारे से।

रात 'राही' की किस तरह गुज़री,
पूछ लेना किसी सितारे से।

दिल की हर आरज़ू नाकाम हुई जाती है,
ज़िन्दगी दर्द का पैग़ाम हुई जाती है।

कैसे मुमकिन है सज़ा प्यार की मुझको न मिले
ख़ुद सफ़ाई मेरी इलज़ाम हुई जाती है।

किसने आँगन में खड़े हो के ये ज़ुल्फ़ें खोलीं,
रोज़े-रोशन है मगर शाम हुई जाती है।

ज़िक्र आते ही तेरा देखते सब मेरी तरफ़,
तू तो अब मेरी ही हमनाम हुई जाती है।

ज़िन्दगी हाथ में मेरे थी ज़हर का प्याला,
तेरे हाथों में मगर जाम हुई जाती है।

हम डुबो आए स्वयं अपनी ही कश्ती 'राही',
तू तो बेकार ही बदनाम हुई जाती है।

कोई वादा कोई क़सम तो नहीं
आँख फिर भी हमारी नम तो नहीं

जितनी ओछी हैं आपकी खुशियाँ
उतने बेकार अपने ग़म तो नहीं

जिनके हिस्से में क़हक़हे आए
उनकी तक़दीर में क़लम तो नहीं

क्यों महाजन की आँख है हम पर
हम कोई सूद की रक़म तो नहीं

आबरू क्यों किसी की लुट जाए
देश है ये कोई हरम तो नहीं

ज़ुल्म के सामने रहें खामोश
और होंगे वो लोग हम तो नहीं

जो भी पाया है खो के पाया है
इसमें कुछ आपका क़रम तो नहीं

ज़िन्दगी को शऊर बख़्शेंगे
एक उम्मीद है वहम तो नहीं

जिनकी तलवार है ज़हर डूबी
उनके बाज़ू में ख़ास दम तो नहीं

अपने अहसान से बरी रक्खा
यह भी अहसान हम पे कम तो नहीं

जिनकी राहें है प्यार की राहें
उनकी राहों में पेचो-ख़म तो नहीं।

किस मुहूरत में दिन निकलता है
शाम तक सिर्फ़ हाथ मलता है

वक़्त की दिल्लगी के बारे में
सोचता हूँ तो दिल दहलता है

दोस्तों ने जिसे डुबाया हो
वो ज़रा देर से सँभलता है

हमने बौनों की जेब में देखी
नाम जिस चीज़ का सफलता है

तन बदलती थी आत्मा पहले
आजकल तन उसे बदलता है

एक धागे की बात रखने को
मोम का रोम रोम जलता है

काम चाहे ज़ेहन से चलता है
नाम दीवानगी से चलता है

उस शहर में भी आग की है कमी
रात-दिन जो धुआँ उगलता है

उसका कुछ तो इलाज़ करवाओ
उसके व्यवहार में सरलता है

सिर्फ़ दो-चार सुख उठाने को
आदमी बारहा फिसलता है

याद आते हैं शेर 'राही' के
दर्द जब शायरी में ढलता है।

इतना बुरा तो तेरा भी अंज़ाम नहीं है
सूरज जो सवेरे था वही शाम नहीं है।

पहचान अगर बन न सकी तेरी तो क्या ग़म
कितने ही सितारों का कोई नाम नहीं है।

आकाश भी धरती की तरह घूम रहा है
दुनिया में किसी चीज़ को आराम नहीं है।

पीने को मिले मय तो तक़ल्लुफ़ है कहाँ का
पी ओक से क़िस्मत में अगर जाम नहीं है।

मत सोच कि क्या तूने दिया तुझ को मिला क्या
शायर है जमा-खर्च तेरा काम नहीं है।

यह शुक्र मना इतना तो इन्साफ़ हुआ है
तुझ पर ही तेरे क़त्ल का इलज़ाम नहीं है।

माना वो मेहरबान है सुनता है सभी की
मत भूल कि उसका भी क़रम आम नहीं है।

उठने दे जो उठता है धुआँ दिल की गली से
बस्ती वो कहाँ है जहाँ कोहराम नहीं है।

टपकेगा रुबाई से तेरा खून या आँसू
राही है तेरा नाम तू खैयाम नहीं है।

कत्थई प्रात है जहाँ मैं हूँ
साँवली रात है जहाँ मैं हूँ

धूप के पाँव डगमगाते हैं
सिर्फ़ बरसात है जहाँ मैं हूँ

हर महकदार फूल क़ैदी है
मुक्त इस्पात है जहाँ मैं हूँ

कीच है बेहिसाब कोई है
पर न जलजात है जहाँ मैं हूँ

लोग खुलते हुए झिझकते हैं
प्यार अज्ञात है जहाँ मैं हूँ

दरपनों से नज़र चुराते सब
झूठ हर बात है जहाँ मैं हँ

सिलवटी ओठ तक नहीं आता
गीत अभिजात है जहाँ मैं हूँ।

डूबने वालों की फ़ेहरिस्त में भी नाम न हो
मेरे जैसा किसी तैराक का अंज़ाम न हो

उस गिरफ़्तार की कैसे हो वकालत आख़िर
जिसके सर पर कोई तोहमत, कोई इल्ज़ाम न हो

कोई पहुँचा दे मेरी आख़िरी ख़्वाहिश उन तक
जो मेरे साथ हुआ उसका चलन आम न हो

बस इसी शक के सहारे हूँ सलामत अब तक
मैं ज़हर जिसको समझ बैठा कहीं जाम न हो

हाय! यह तक न कहा मैंने कि ब्रूटस, तुम भी
मेरे दिल में ये रहा दोस्ती बदनाम न हो

बैठकर देर तलक सुनता रहा ख़ामोशी
इस इरादे से कि इसमें तेरा पैग़ाम न हो

मैंने उफ़ तक भी न की ज़ुल्म जो हद से गुज़रा
सोच कर यह कि कहीं यह भी तेरा काम न हो

रोशनी रोशनी चिल्लाओगे तुम याद रखो
कैसे मुमकिन है कि सूरज हो ज़िबह, शाम न हो

वो मुझे देखकर कह दें कि कहीं देखा है
हो अगर ये भी तमाशा तो सरे-आम न हो

लोग कहते हैं दवा से है बड़ी चीज़ दुआ
क्या करे कोई दुआ से भी जो आराम न हो

आजकल मेरी ग़ज़ल ग़ौर से सुनना यारो
मैंने जो कुछ भी कहाँ है कहीं इल्हाम न हो।

ये महके जिस्म, दहके दिल बड़ी रंगत के दिन आए
हमारे दिन गए दुनिया में तब जन्नत के दिन आए

किसी महफ़िल, किसी जलवे, किसी बुत से नहीं नाता
पड़े हैं एक कोने में अजब फ़ुर्सत के दिन आए

हमें परहेज़ की बारीकियाँ समझाई जाती हैं
कि जब रंगीन शामों में खुली दावत के दिन आए

हमारे वक़्त में तो क़ैद थी तन्हाइयों पर भी
मगर अब तो सरे-बाज़ार हर जुर्रत के दिन आए

हमारा कनखियों से देखना भी नामुनासिब है
हमारे वास्ते तो बेवज़ह तोहमत के दिन आए

ये क्या क़िस्सा है जब अरमान दुनिया के निकलते हैं
हमारे वास्ते ही किसलिए हसरत के दिन आए

बुज़ुर्गों में हमारा नाम भी शामिल हुआ शायद
बड़ी बदनामियों के साथ ये शोहरत के दिन आए

खुले गेसू, खुले कंधे, खुली बाहें, खिले चेहरे
समन्दर की हवा-सी बेझिझक चाहत के दिन आए

चलो राही पुराने दोस्तों के पास हो आएं
तसल्ली दिल की कुछ तो हो बड़ी आफ़त के दिन आए

हम पर दुख का परबत टूटा तब हमने दो-चार कहे
उस पे भला क्या बीती होगी जिसने शेर हज़ार कहे

हमें ज़रा बनवास काटना पड़ा अगर कुछ दिन तो क्या
उसकी सोचो जो जंगल को ही अपना घर-बार कहे

सीधे-सच्चे लोगों के दम पर ही दुनिया चलती है
हम कैसे इस बात को मानें कहने को संसार कहे

अपना-अपना माल सजाये सब बाज़ार में आ बैठे
कोई इसे कहे मजबूरी कोई कारोबार कहें

लूटमार में सबका यारो एक बराबर हिस्सा है
कोई किसको चोर कहे तो किसको चौकीदार कहे

अब किसके आगे हम अपना दुखड़ा रोयें छोड़ो यार
एक बात को आख़िर कोई बोलो कितनी बार कहे

ढूँढ रहे हो गाँव-गाँव में जा कर किस सच्चाई को
सच तो सिर्फ़ वही होता है जो दिल्ली दरबार कहे

ढोल पीटता फिरता था जो गली-गली में वादों का
इतना हाहाकार मचा है कुछ तो आख़िरकार कहे

लैला की उल्फ़त का सौदा नामुमकिन है दोस्त मगर
एक बार फिर तो दुहराना कितने थे दीनार कहे

जिनकी आँखों में ग़ैरत थी वे कब के बेनूर हुए
उसकी ख़ुद्दारी क्या देखें जो ख़ुद को ख़ुद्दार कहे

शेर वही हैं शेर जो राही लिखे ख़ून या आँसू से
बाक़ी तो सब अल्लम-ग़ल्लम कहे मगर बेकार कहे।

गीत

पलकें बिछाए तो नहीं बैठीं

कटीले शूल भी दुलरा रहे हैं पाँव को मेरे,
कहीं तुम पंथ पर पलकें बिछाए तो नहीं बैठीं!

हवाओं में न जाने आज क्यों कुछ-कुछ नमी-सी है,
डगर की उष्णता में भी न जाने क्यों कमी-सी है,
गगन पर बदलियाँ लहरा रही हैं श्याम-आँचल-सी
कहीं तुम नयन में सावन छिपाए तो नहीं बैठीं!

अमावस की दुल्हन सोई हुई है अवनि से लगकर,
न जाने तारिकाएँ बाट किसकी जोहतीं जग कर,
गहन तम है डगर मेरी मगर फिर भी चमकती है
कहीं तुम द्वार पर दीपक जलाए तो नहीं बैठीं!

हुई कुछ बात ऐसी फूल भी फीके पड़े जाते,
सितारे भी चमक पर आज तो अपनी न इतराते,
बहुत शरमा रहा है बदलियों की ओट में चँदा,
कहीं तुम आँख में काजल लगाए तो नहीं बैठीं!

कटीले शूल भी दुलरा रहे हैं पाँव को मेरे,
कहीं तुम पंथ पर पलकें बिछाए तो नहीं बैठीं!

गीतों की भाषा

तुम्हीं न समझीं जब मेरे गीतों की भाषा,
दुनिया सौ-सौ अर्थ लगाए, क्या होता है!

यह मेरे मन की कमज़ोरी या मजबूरी—
कुछ भी कह लो, सिर्फ़ तुम्हें ही अपनाया है,
तुम्हें समर्पित किया सहज ही इस जीवन में—
जो कुछ भी खोया-पाया, रोया-गाया है!
तुम्हीं न दुहरा पाईं मेरा गीत प्राण, जब,
सारे-का-सारा जग गाए, क्या होता है!

मात्र बहाना था गीतों का सृजन मुझे तो—
अपना दर्द तुम्हारे दिल तक पहुँचाना था,
जो न अन्यथा कह पाता मैं—सुन पातीं तुम,
कुछ ऐसा था राज़ तुम्हें जो समझाना था!
मेरा दर्द न छू पाया जब हृदय तुम्हारा,
पत्थर का भी दिल पिघलाए, क्या होता है!

और सभी मिल जाते केवल वही न मिलता—
चाह करो जिसकी, दुनिया का यही नियम है,
सारे स्वर सध जाते केवल वही न सधता—
जो प्रिय हो मन को, जीवन ऐसी सरगम है!
तुम्हीं न अर्पण मेरा जब स्वीकार कर सकीं,
यह सारी दुनिया अपनाए, क्या होता है!

तुम्हीं न समझीं जब मेरे गीतों की भाषा,
दुनिया सौ-सौ अर्थ लगाए, क्या होता है!

बात बिरानी हो जाती है

मेरे मन की साध आँख में झाँक आँक लो,
कह देने पर बात बिरानी हो जाती है!
सो जाए चुपचाप लहर दृग मूँद रेत पर,
मृदु नीरवता बिखर उठे जब खेत-खेत पर,
चाँद छिपाए काली घुँघराली अलकों में
तुम आना जैसे सपने आते पलकों में!
मत खनकाना चूड़ी तुम पायल न बजाना,
खुल जाने पर प्रीत कहानी हो जाती है!
फड़केगी जब आँख धीरता चुक जाएगी,
चँदा पर जब कोई बदली झुक जाएगी,
लजा रहे हों हँस, कमलिनी शरमाई हो—
मैं खुद लूँगा समझ सुनयने, तुम आई हो।
तुम शशि-मुख से घूँघट तनिक उठा देती हो,
लहरों की बेताब जवानी हो जाती है!
तुम आती हो पास हास-उल्लास संजोए,
प्रबल चाह से अपने आकुल अधर भिगोए,
ढल जाती है रात-बात पर कब हो पाती,
मैं रह जाता खोया-खोया, तुम शरमाती।
कैसा जादू प्राण, न जाने तुम कर देतीं,
ख़ुद अपनी ही सांस अजानी हो जाती है!
मेरे मन की साध आँख में झाँक-झाँक लो,
कह देने पर बात बिरानी हो जाती है!

भर दिया जाम

भर दिया जाम जब तुमने अपने हाथों से,
प्रिय! बोलो, मैं इन्कार करूँ भी तो कैसे!

वैसे तो मैं कब का दुनिया से ऊब चुका,
मेरा जीवन दुख के सागर में डूब चुका,
पर प्राण, आज सिरहाने तुम आ बैठीं तो—
मैं सोच रहा हूँ हाय, मरूँ भी तो कैसे!

मंज़िल अनजानी, पथ की भी पहचान नहीं,
है थकी-थकी-सी सांस, पाँव में जान नहीं,
पर जब तक तुम चल रहीं साथ मधुरे, मेरे
मैं हार मान अपनी ठहरूँ भी तो कैसे!

मंझधार बहुत गहरी है, पतवारें टूटीं,
यह नाव समझ लो, अब डूबी या तब डूबी,
पर यह जो तुमने पाल तान दी आँचल की,
जब मैं लहरों से प्राण, डरूँ भी तो कैसे!

भर दिया जाम जब तुमने अपने हाथों से,
प्रिय! बोलो, मैं इन्कार करूँ भी तो कैसे!

नज़र न लग जाए

नज़र न लग जाए चकोर की इसलिए
लगा दिया काजल का टीका रात ने
चँदा के चाँदी-से गोरे गाल पर!

वातावरण तपस्वी जैसा मौन है,
उसको क्या मालूम सामने कौन है,
शीश धरे जमुना की शीतल धार पर
सरल-हृदय बालक-सा सोया पौन है!
दो प्रेमी बैठे हैं सटे कगार पर,
तैर रहा प्रतिबिम्ब दूधिया धार पर,
आस-पास तन्द्रिल नीरवता ऊँघती
कोई पहरेदार नहीं है द्वार पर!

पर न तृप्ति है प्यार, प्यास है इसलिए
टाल रहा है रूप समर्पण की घड़ी
शरमाये मुखड़े पर आँचल डाल कर!

घृणा अतृप्त प्यार का ही इतिहास है,
पतझार क्या है संन्यासी मधुमास है,
रात भूमिका किसी सुनहरी भोर की
शंका केवल दिशा-भ्रमित विश्वास है।
कोई बुरा नहीं है मौलिक रूप में,
नया जन्म लेता सौन्दर्य कुरूप में,
दोनों का ही नाता है आलोक से
कोई अन्तर नहीं छाँह में, धूप में।

इसीलिए निर्मल सागर से रूठ कर
धर कर चरण पंक के मैले अंक में
झूम रहा पंकज पुलकित मन ताल पर।

गीत किसी खिलते गुलाब की पाँखुरी,
गीत किसी मोहन की मोहक बाँसुरी,
गीत किसी मन्दिर का पावन दीप है
जिसके आगे विनत अँधेरा आसुरी!
गीत व्याप्त है हर कोमल सम्बन्ध में
गीत महकता है हर मादक गँध में,
कह सकता है कौन कि पहली बार ही
वाणी मुखरित नहीं हुई थी छन्द में?

कोई मनमौजी विहंग है गीत जो
युग-विशेष के बन्धन से उन्मुक्त हो
पंख पसार उड़ा करता हर काल पर!

श्याम रंग में रंगी चुनरिया

श्याम रंग में रंगी चुनरिया
कौन दूसरा रंग खिलेगा?

बैठी हूँ मैं ठगी-ठगी-सी,
सोई-सोई जगी-जगी-सी,
गूँज रही अब तलक कान में
तान मधुर वह प्रीत-पगी-सी!
टोना-सा कर गई बँसुरिया
मोह-मंत्र अब कौन छलेगा?

पावन चरण छुए मोहन के,
भाग्य जगे मेरे आँगन के,
अब क्या जमुना-तीर सुहाए
सपन छलें कैसे मधुवन के!
घर आए जब स्वयं संवरिया
कौन गाँव अब पाँव चलेगा?

कभी न प्रिय का हाथ गहूँगी,
इंगित कर हर बात कहूँगी,
उनकी मायावी काया के
छाया बन कर साथ रहूँगी।
लगे न जग की निठुर नज़रिया
चुपके-चुपके प्यार पलेगा।

सजी न मैं बारात न आई,
बजी न मेरे घर शहनाई,
फिरे न फेरे, चढ़ी न डोली
फिर भी मैं हो गई पराई!
ब्याह-जोग मेरी न उमरिया
कैसे उनसे जोड़ मिलेगा?

श्याम रंग में रंगी चुनरिया
कौन दूसरा रंग खिलेगा?

ओ कारे कजरारे बादल!

हाथ जोड़ करती हूँ तुमसे केवल यह मनुहार,
ओ कारे कजरारे बादल, घिरो न मेरे द्वार!

वैसे ही कमज़ोर बहुत होते बिरहिन के प्राण,
उस पर भी बरसाए जाते तुम बूँदों के बाण,
गरज-गरज ऐसे भी कोई करता होगा शोर,
लरज-लरज जाता मन मेरा पीपर-पात-समान!
कैसे करूँ काँपते पाँवों से देहरिया पार,
पर्वत-सी ऊँची हो आई आँगन की दीवार!

कान्हा-जैसा रूप तुम्हारा, कान्हा-जैसा वेश,
कान्हा-जैसे ही गूँथे हैं तुमने अपने केश,
अधरों पर वंशी विद्युत की, इन्द्रधनुष का हार,
इंगित कर-कर मुझे दे रहे मिलने का सन्देश।
सांवरिया-सा अभिनय करना सीख लिया, यह ठीक,
किन्तु कहाँ से लाओगे तुम उन-सा हृदय उदार?

छेड़ रही हर सखी-सहेली ले कर मेरा नाम—
'कर सोलह-सिंगार राधिके, घर आए घनश्याम'!
पहले तो बैरिन थी मेरी केवल काली रात,
अब तो दुश्मन हुआ जान का, यह सारा ही गाम।
कोई नहीं आंकता मन की निर्मलता का मोल,
केवल तन का कलुष देख पाता है यह संसार!

जब से श्याम गए मधुबन में खिला न कोई फूल,
भटक रही सिर धुनती अपना पतझर की ही धूल,
जिसे खींच कर कभी कन्हैया करते थे खिलवार,
काँटे थाम-थाम लेते हैं अब तो वही दुकूल।
ऋतुओं का क्रम बदल गया, कैसे अचरज की बात,
पहले ही बरसात आ गई, आई नहीं बहार।

हाथ जोड़ करती हूँ तुमसे केवल यह मनुहार,
ओ कारे कजरारे बादल, घिरो न मेरे द्वार।

फिर कोई

फिर कोई चेहरा बस गया निगाहों में।

खोए हुए क्षितिज फिर उभरे
अस्तमान सूरज फिर उबरे
फिर रेशम बिछ गया कंटीली राहों में।

जब से देखी हैं वे आँखें
उग आई कँधों पर पाँखें
फिर सपने उड़ चले अदेखी चाहों में।

जहाँ-जहाँ भी छुआ गया हूँ
वहाँ-वहाँ हो गया नया हूँ
फिर कोई कस गया जादुई बाँहों में।

प्रौढ़ वासना बनी किशोरी
फिर बलवती हुई कमज़ोरी
मोम पिघलने लगा शबनमी दाहों में।

देख लिया है तुम्हें

देख लिया है तुम्हें आँख भर एक बार, अब किसे निहारूँ?

तुम विहान की किरण, जिसे भी छू दो वह कंचन बन जाए,
तुम गंगा की धार, नहाए जो भी वह दरपन बन जाए,
प्राण, तुम्हारे नयन-सीप में आँसू मोती बन जाता है,
हाथ लगा दो रज-कन को तो वह सुरभित चन्दन बन जाए!
जिस दिन से तुमको देखा है, मैंने आँख नहीं खोली है,
मन ही हुआ नहीं कि किसी की अगवानी को पलक उघारूँ।

मेरा आँगन तीर्थ बन गया, तुम जो मेरे द्वारे आए,
जैसे ज्योति-विहंगम कोई अपने पँख पसारे आए,
इतना भाग्य कहाँ था मेरा, जीते-जी तुम को लख पाता,
कौन जनम का पुण्य जगा जो, मैंने दरस तुम्हारे पाए।
रोना यदि अपशकुन न होता, मैं दृगजल से पग पखारता,
अगरु-घूम से भी पवित्र हो तुम, कैसे आरती उतारूँ?

जितना दान मिला है तुमसे, मेरा उतना ही अर्जन है,
जितने गीत लिखे हैं तुम पर, केवल उतना ही सर्जन है,
जीवन के हर क्रय-विक्रय में मैंने तो खोया-ही-खोया,
क्या दे पाएगा जग मुझको, वह तो स्वयं निपट निर्धन है!
जनम-जनम का भिखमंगा मैं, पाकर तुम्हें कुबेर हो गया,
अब क्या है दरकार किसी के आगे अपने हाथ पसारूँ?

कमलों का व्यापार करे क्यों सागर-तट पर रहने वाला,
क्यों न सजाए भला हाट पर माणिक-मुक्ताओं की माला,

कल्पलता की छाँह बैठ कर डाह करूँ किस भाग्यवान से,
क्यों तम से समझौता कर लूँ पाकर किरणों का उजियाला?

एक बार संस्पर्श ज्योति का पाकर तम को छुआ न जाता,
मैं तो सूर्यमुखी जैसा हूँ, कैसे निशि की अलक सँवारूँ?
देख लिया है तुम्हें आँख भर एक बार, अब किसे निहारूँ?

तुम न बुझाना दीप

तुम न बुझाना दीप द्वार का प्राण, रात-भर,
मेरा जगमग पथ अंधियारा हो जाएगा!

गहन अमावस यह फनवाली नागन बन कर
धरती का चन्दन-तरु-सा तन घेर गई है,
नीले पड़े अधर अम्बर के, चाँद मर गया
जाने कैसा तीखा गरल बिखेर गई है।
तुम हताश होकर जिस क्षण लौ मन्द करोगी,
ज्वार तिमिर का मेरी राह डुबो जाएगा!

मुझे बढ़ाती हाथ थाम मनुहार तुम्हारी
जबकि साथ मेरा दुनिया-भर छोड़ रही है,
मेरे अन्तर का सम्बन्ध डोर गीतों की—
प्राण, तुम्हारे अन्तरतम से जोड़ रही है!
तुम सितार के तार तोड़ मत देना थक कर,
हर निशान मेरे पथ का प्रिय, खो जाएगा!

कौन सहारा होगा इससे बड़ा पथिक को
कोई उसका अपलक पंथ निहार रहा है,
जब सारे-का-सारा जग दृग मूँद सो रहा
वह बुझते दीपक की शिखा उभार रहा है!
जाग रहीं तुम, मेरा भी विश्वास सजग है,
तुम सोओगी, मेरा साहस सो जाएगा!

तुम न बुझाना दीप द्वार का प्राण, रात-भर,
मेरा जगमग पथ अंधियारा हो जाएगा!

बिछुड़ा मीत निहार रहा मैं

मुझे शिकायत-भरी नज़र से तुम मत देखो,
तुममें अपना बिछुड़ा मीत निहार रहा मैं!

कुछ वैसे-ही लोचन, लोचन का सूनापन,
झुकी-झुकी-सी पलक, निगाहें उन्मन-उन्मन,
बिल्कुल वैसी-ही बिखरी-बिखरी-सी अलकें
बिल्कुल वैसा-ही अधरों का मादक कम्पन!
रूप तुम्हारा अंकित कर दृग की पुतली पर,
किसी प्रवासी की तस्वीर उतार रहा मैं!

आज तुम्हें यद्यपि पहली ही बार निहारा,
किन्तु लगा परिचित-सा हर संकेत तुम्हारा,
पूर्व-जन्म की साथिन-सी मिल गई आज तुम
डूबी-डूबी नाव स्वयं पा गई किनारा!
स्वर में भर मनुहार, दृगों में सजल वेदना,
तुम्हें प्यार से सौ-सौ बार पुकार रहा मैं!

मुझे ज्ञात यह बात प्राण, तुम हो बेगानी,
अभी-अभी वर लोगी कोई राह अजानी,
किन्तु पास बैठो तुम पल-भर, यह क्या कम है,
सुन न सको चाहे तुम मेरी कसक-कहानी!
अगर रुक सको पल-भर तो अहसान तुम्हारा,
तुममें अपने दिल का दर्द बिसार रहा मैं!

यहाँ सभी हैं प्रीत जता कर छलने वाले,
आँख मिला कर ख़ुद ही आँख बदलने वाले,
मेरा अनुभव कहता, कब अपने होते हैं
चलते-चलते चौराहों पर मिलने वाले!
इसीलिए शंकित हूँ दाँव लगा निजता का,
तुम्हें जीत बैठा कि स्वयं को हार रहा मैं!

मुझे शिकायत-भरी नज़र से तुम मत देखो,
तुममें अपना बिछुड़ा मीत निहार रहा मैं!

रूप निहार रहा हूँ

तुम्हें देखता हूँ जब-जब भी, कुछ ऐसा लगता है,
जैसे दर्पण में अपना ही रूप निहार रहा हूँ।

तुम मिलने आती हो तो यह भाव जागता मन में,
दूर देश में भटक-भटक कर मैं ही घर आया हूँ,
तुम हँस देती हो, ऐसा पुलकित होता हूँ जैसे
कोई बालक हूँ, झोली में सीपी भर लाया हूँ।
मेंहदी रचे हाथ से जब तुम द्वार थपथपाती हो,
लगता है मैं ही ले अपना नाम पुकार रहा हूँ।

हाथ तुम्हारा कभी छू लिया तो आभास हुआ यह—
दाएँ कर में मैंने बाएँ कर को थाम लिया है,
सोया गोद तुम्हारी मन में बात मगर आई यह—
धर कर शीश बाँह पर अपनी ही आराम किया है।
अलक तुम्हारी कभी गूँथ दी, मुझे लगा कुछ ऐसा,
जैसे मैं अपने ही बिखरे केश सँवार रहा हूँ।

आँख तुम्हारी भर आई जो कभी किसी पीड़ा से,
मेरी पलक सावनी बादल-सी गीली हो आई,
कभी उदास देख जो मैंने लिया तुम्हारा चेहरा,
साँस-साँस मेरी सहसा ही दर्दीली हो आई।
तुम्हें विजय मिल गई रहा त्यौहार मनाता दिन-भर,
तुम हारीं तो लगा कि जैसे मैं ही हार रहा हूँ।

यों सब ही कहते हैं हम-तुम एक नहीं हैं, दो हैं,
जाने क्यों उनपर मुझ को विश्वास नहीं होता है,
प्राण एक हो तो अलगाव देह का अर्थरहित है,
देह-मिलन से ही तो कोई पास नहीं होता है।
तुम्हें प्यार कर लिया कभी अपनी बांहों में भर कर,
ऐसा अनुभव किया स्वयं को स्वयं दुलार रहा हूँ।

तुम्हें देखता हूँ जब-जब भी, कुछ ऐसा लगता है,
जैसे दर्पण में अपना ही रूप निहार रहा हूँ।

मेरा रूप तुम्हारा दर्पण

कैसे छूटे मोह तुम्हारा, कैसे सहूँ विछोह तुम्हारा,
ऐसा एक न दीखा जग में, जिसे देख कर तुम्हें बिसारूँ।

पीछे पथ था आगे पथ है, एक अनागत एक विगत है,
रुकी-रुकी पालकी साँस की, ठहरा-सा जीवन का रथ है,
थकी उमरिया भटक-भटक कर, इस पनघट पर उस मरघट पर,
हृदय विरत है, काया श्लथ है, अन्तर की वेदना अकथ है!
किससे मन की बात कहूँ मैं, बोलो, किसका हाथ गहूँ मैं,
ऐसा एक न दीखा पथ पर, तुम्हें समझ कर जिसे पुकारूँ।

मैं सोई तो सपन पठाए, किरण भेंट की जब मैं जागी,
तुमने दान दिया युग-युग तक, मुझसे कोई वस्तु न माँगी,
तृष्णा ने ऐसा भटकाया, मैंने द्वार-द्वार खटकाया,
तुपसे बिछुड़ी एक बार तो मिल न सकी फिर मैं हतभागी!
हर नगरी हर डगर निहारी, सब ही मुझ-से मिले भिखारी,
तुम-सा दाता एक नहीं है, किसके आगे हाथ पसारूँ?

जब से तुम इस ओर न आए, खिला न चन्दा जली न बाती,
गहन अमावस भटक रही है मेरे आँगन में बिलखाती,
सागर-से गम्भीर हो गए, तुम ऐसे बेपीर हो गए—
एक न भेजा मिलन-सन्देसा, एक बार भी खिली न पाती।
गिनते-गिनते दिन पखवारे, घिसे अँगुलियों के नख सारे,
द्वार खड़ा अवसान पुकारे, बोलो, कब तक पंथ निहारूँ?

ध्यान बना रहता है मुझको, सुबह तुम्हारा, शाम तुम्हारा,
हर आने-जाने वाले से, मैंने पूछा गाम तुम्हारा,
ऐसी फैली बात जगत में, चलते-चलते मुझको पथ में—
छेड़-छेड़ जाता हर पंथी, ले-ले कर प्रिय, नाम तुम्हारा!
आ-आ कर शंकित जग सारा, पूछ रहा सम्बन्ध हमारा,
किस-किसका सन्देह मिटाऊँ, मैं किस-किस का भरम निवारूँ?

रूप बहुत हैं, रंग बहुत हैं, पर तुम-सा छविमान न कोई,
जिसने देखा एक बार वह आँख रह गई खोई-खोई,
हरसिंगार-सा गात तुम्हारा, हृदय विमल गंगा की धारा,
जिस दिन तुम कुछ रहे अनमने, प्रात न जागा रात न सोई।
स्नेह-सिक्त दृग के सावन हो, शुभ्र हिमालय से पावन हो,
कैसे भाल लगाऊँ चन्दन, बोलो, कैसे चरण पखारूँ?

मेरा नाम तुम्हारा परिचय, मेरा रूप तुम्हारा दर्पण,
मेरी देह तुम्हारा मन्दिर, मेरा गेह तुम्हारा मधुबन,
ध्यान बना राधिका तुम्हारी, ज्ञान बना साधिका तुम्हारी,
मेरा मन बन गया मुरलिया, मेरी साँस तुम्हारा सुमिरन।
मेरे गीत तुम्हारी थाती, सुन-सुन कर दुनिया भरमाती,
ऐसा क्या है जिसे मान कर अपना जगवालों पर वारूँ?

कैसे छूटे मोह तुम्हारा, कैसे सहूँ विछोह तुम्हारा,
ऐसा एक न दीखा जग में, जिसे देख कर तुम्हें बिसारूँ।

जाऊँ किसके द्वार

जिनको ठुकरा देती दुनिया वे आ जाते द्वार तुम्हारे,
मैं ठुकराया हुआ तुम्हारा जाऊँ किसके द्वार, बताओ?

तुमसे अधिक सदय, करुणामय सारे जग में और कौन है,
मेरी पीर निहार न पिघला जबकि तुम्हारा निठुर मौन है—
किसके आगे फटी-पुरानी यह अपनी झोली फैलाऊँ,
किसके आगे किस आशा में, दूँ मैं हाथ पसार, बताओ?

दुनिया की हर गली छोड़ कर आया मैं देहरी तुम्हारी,
किन्तु न खोली तुमने मुझ पर, अपने घर की बन्द किवारी,
एक झरोखे से झाँका, कह दिया—'मुसाफ़िर, आगे जाओ',
आधी रात भला खटकाऊँ किसके बन्द किवार, बताओ?

मैंने सोचा था तुम पर चल जाएगा गीतों का टोना,
गीत बहुत छलिया होते कुछ कर दिखलाएँगे अनहोना,
किन्तु तुम्हें देखा तो सारे शब्द तुम्हीं में लीन हो गए,
कैसे व्यथा सुनाऊँ, कैसे कर पाऊँ मनुहार, बताओ?

मैंने भी चाहा था अपनी चादरिया उजली रख पाऊँ,
जैसी मुझे मिली थी तुमसे वैसी ही तुमको लौटाऊँ,
पर शिशु-सा नटखट मन मेरा जान-बूझ माटी से खेला,
अधिक सुहाता कंचन से क्यों इसको गर्द-गुबार, बताओ?

पावनता के तीर खड़े तुम, मैं डूबा आकंठ पाप में,
किन्तु कलुष यह गल जाएगा, क्या न तुम्हारे पुण्य-ताप में,

तुमने तो इससे भी ज़्यादा बोझिल पापों को ढोया है,
बाँह थाम कर फिर मेरी ही लोगे क्या न उबार, बताओ?

अब तो यह अन्तिम दरवाज़ा, अन्तिम भिक्षा, अन्तिम अनुनय,
या तो अभय-दान मिल जाए या जीवन का हो जाए क्षय,
कब तक जनम-मरण की अँधी गलियों में मैं फिरूँ भटकता,
कब तक और उठारूँ सिर पर माटी के आभार, बताओ?

जिनको ठुकरा देती दुनिया वे आ जाते द्वार तुम्हारे,
मैं ठुकराया हुआ तुम्हारा जाऊँ किसके द्वार, बताओ?

जीवन तो संयोग मात्र है

तन-मन-धन सब तुम्हें समर्पित, जैसे रखो प्राण, रह लेंगे।

अपना क्या है, नियति-पवन में तृण से उड़ कर आ निकले हैं,
जाने किस नगरी से आए, जाने किस के गाँव चले हैं,
डगर-डगर पर भटक चुकी है, यह मुट्ठी-भर धूल हमारी
जाने कितने रूप धरे हैं, जाने कितने घर बदले हैं।
किसी फूल ने कंठ लगाया तो शायद सुरमित हो जाएँ,
और अगर जा गिरे मरुस्थल में तो भी क्या है, दह लेंगे।

कितने रोज़ बसे मधुवन में, कितने रोज़ बसाए निर्जन,
हर सम्भव कोशिश कर देखी, पर न बहल पाया उन्मन मन,
स्वप्न और आँसू में शायद जन्म-जन्म का बैर-भाव है,
सपने स्निग्ध चरण होते हैं, चलते सदा बचा कर फिसलन!
हम कब इतने हुए व्यवस्थित, किसी सृजन का श्रेय कमाते,
निमिति हुई हमारी इसी लिए कि ढहें, क्या है, ढह लेंगे।

इससे क्या आशाएँ बाँधें, जीवन तो संयोग-मात्र है,
सब से अधिक सुखी है वह ही अधिक सभी से जो अपात्र है,
क्योंकि भाग्य जन्मांध, किरण के अहंभाव को क्या पहचाने,
राज्यतिलक करता उसका ही, जो फैलता दान-पात्र है।
हम ने शीश उठाए रख कर पाप किया है, हम भोगेंगे,
जीवन का हर व्यंग्य बधिर की भाँति सहज मन से सह लेंगे।

पाप हमारे किए तिरस्कृत, केवल निर्मल पुण्य सराहा,
जिस ने भी इस भरे जगत में, चाहा हमें, अधूरा चाहा,

तुम इतने निष्काम, हमारा कलुष तुम्हें पावन लगता है,
चहल-पहल से अधिक, अकेलेपन में तुम ने साथ निबाहा।
इसीलिए अविभाजित मन से, हम सम्पूर्ण समर्पित तुम को,
अगर डुबाओ तो डूबेंगे, अगर बहाओ तो बह लेंगे।

तन-मन-धन सब तुम्हें समर्पित, जैसे रखो प्राण, रह लेंगे।

मीत, तुम जगते रहना

गाऊँ जब तक गीत मीत, तुम जगते रहना।

तुम मूँदोगे पलक तमिस तिर आएगी,
गीतों के चँदा पर बदली घिर जाएगी,
गीत गा रहा मैं कि तुम्हारी मेरे उर में—
गाती पागल प्रीत मीत, तुम सच-सच कहना।

पतवारें तो साथ न प्रिय, मैं ले पाया था,
क्योंकि बुलाया तुमने इसीलिए आया था,
अब तुम कहतीं बढ़ो, बढ़ा जा रहा निरन्तर,
मिले हार या जीत मीत, तुम संग-संग बहना!

एक तुम्हारा रूप नयन में डोल रहा है,
अधरों पर जीवन का अमृत घोल रहा है,
सौ-सौ दोष लगाए जगती, या हो जाए--
निठुर नियति विपरीत मीत, मेरा कर गहना!
गाऊँ जब तक गीत मीत, तुम जगते रहना!!

यह कैसे हुआ मीत

मोहरे वही, बिसात भी वही, खिलाड़ी भी,
यह कैसे हुआ मीत, शतरंजी जीवन में
जीत गई एक चाल, एक चाल हार गई?

भोर हुई धरती पर बिखर गया सोना-सा,
अनहोना हुआ किया किसने यह टोना-सा,
घाटी में, चोटी पर खेल रहा कूद-कूद
बादल का टुकड़ा यह लगता मृगछौना-सा।

कमलों की आँख खुली, निशिगंधा मुरझा गई,
यह कैसे हुआ मीत, सूरज की वही किरण–
एक को उजाड़ गई, एक को सँवार गई?

वैसे ही साधन थे, एक-सा सुभीता था,
दो ग़ोताखोरों का समय साथ बीता था,
साथ-साथ डूबे वे, साथ-साथ उभरे पर–
एक हाथ था मोती, एक हाथ रीता था।

सिन्धु वही, धार वही, माँझी, पतवार वही,
यह कैसे हुआ मीत, एक लहर नौका को
गहरे में डुबो गई, दूसरी उबार गई?

यह कैसी छलना है, यह किसकी क्रीड़ा है,
एक नयन आँसू है, एक नयन व्रीड़ा है,
एक प्यार तड़पन है, एक प्यार गायन है,
एक याद पुलकन है, एक याद पीड़ा है।

कल तक जो मलयवात मिलने की बेला में
चन्दन बिखराती थी, यह कैसे हुआ मीत,
आज वही सूने में ताना-सा मार गई?

हम सब कठपुतली हैं हाय, नहीं सूत्रधार?
भटके-से फिरते हैं खटकाते द्वार-द्वार,
जो कुछ भी होना है भाल पर लिखा है यदि
फिर कैसी दौड़-धूप, फिर कैसी जीत-हार?

परवशता मात्र सत्य, शेष अगर मिथ्या है,
यह कैसे हुआ मीत, एक तृषा चुपके से
जीवन की दुलहन को फिर भी मनुहार गई?

मोहरे वही, बिसात भी वही, खिलाड़ी भी
यह कैसे हुआ मीत, शतरंजी जीवन में
जीत गई एक चाल, एक चाल हार गई?

उमर एक बीती

उमर एक बीती डगर खोजते ही,
रही और जो शेष चलते कटेगी।

अजब बेबसी है चले जा रहे हैं,
किसी गाँव में पाँव थमते नहीं हैं,
किसी वेश पर मुग्ध होता नहीं मन,
किसी देश में प्राण रमते नहीं हैं।
नहीं क्योंकि दस्तूर यह ज़िन्दगी का
किसी लक्ष्य के भाल को चूम लेना,
यही एक आदत रही हर सफर की,
यहाँ घूम लेना, वहाँ घूम लेना।

क़दम-दो-क़दम जो चले हम सम्भल कर,
उमर दोस्त, सारी फिसलते कटेगी।

चले थे यही सोच कर कुछ मिलेगा,
मगर हम सभी कुछ यहाँ खो चले हैं,
स्वयं कल जिसे ज़िन्दगी सौंप दी थी,
उसी से बहुत बदगुमां हो चले हैं।
भिखारी हुए आज सम्राट कल थे,
न सन्तोष तब था, न सन्तोष अब है,
सज़ावार तब थे, सज़ावार अब हैं,
न कुछ दोष तब था, न कुछ दोष अब है।

सजाते हुए स्वप्न संध्या बिताई,
मगर रात करवट बदलते कटेगी।

तबीयत उदासीन पर साफ़ नीयत,
बहुत स्वाभिमानी, बहुत ही हठीले,
यही एक पहचान निश्चित हमारी,
नयन-कोर अरुणिम, अधर-छोर गीले।
किसी दूसरे द्वार को खटखटाओ,
जगाओ न हमको कि सोए हुए हैं,
अभी होश की बात हमसे न होगी,
सताओ न हमको कि खोए हुए हैं।

गुज़ारी गई रात जो बेखुदी में,
सुबह क्या न उसकी सँभलते कटेगी?

हमें इसलिए ही किनारे जिलाते,
कहीं गोद सूनी न मंझधार लौटे,
हमें इसलिए ही बहारें खिलातीं,
कहीं हाथ खाली न पतझार लौटे।
हमें इसलिए आशियाना मिला है,
घिरी बिजलियों पर उदासी न छाए,
न हम हों नियति व्यंग्य किस पर करे फिर,
कहाँ दर्द जाए, कहाँ मौत जाए?

अगर चाँद चन्दन लगा दे समझ लो,
उभरती हुई भोर जलते कटेगी!

लगाया गया दाँव पर प्यार जब-जब
विजय का पुरस्कार बन कर मिला ग़म,
रक्रम गाँठ की तो लुटा दी कभी की
ऋणी हो चले हर किसी के यहाँ हम।

मरण के यहाँ प्राण गिरवी रखे हैं,
बची देह थी धूल के नाम कर दी,
कभी दाँव चलना न आया हमें ही,
बिना बात शतरंज बदनाम कर दी।

उमर एक गुज़री हमें चाल चलते,
रही शेष जो हाथ मलते कटेगी।

गीत और मैं

मैं न बुलाने गया कभी गीतों को इनके द्वार,
ये ही पता पूछते सबसे, आए मेरे पास।
जाने इनके कानों में कह दी किसने यह बात:
'उसे सुला आओ वह ही जगता है सारी रात'।
मैं तो बचपन से एकाकी रहने का अभ्यस्त,
मुझे रास आता है केवल सूनेपन का साथ।
पर यह तो नटखट गीतों की बहुत पुरानी टेव,
जान-जान कर उसे छोड़ते, देखें जिसे उदास।

मेरी ऐसी पीर कि जिसका मुझसे ही सम्बन्ध,
फूल अगर हूँ मैं गुलाब का, वह है मेरी गंध,
मैं न कभी चाहूँगा धर कर वह जोगिन का वेश,
द्वार-द्वार पर अलख जगाए, बन दर्दीले छन्द।
मेरी पीर बहुत कोमल है, दुनिया बड़ी कठोर,
वह दुलार पाएगी सबका, इसका क्या विश्वास?

एक शाम मेरे घर आ कर बोले मुझसे गीत—
'राज़ तुम्हारा कभी किसी से हम न कहेंगे मीत'।
पहले तो बहला-फुसला कर जान लिया सब भेद,
अब प्रचार करते फिरते हैं मेरे ही विपरीत।
आँगन-आँगन मेरी बदनामी करते हर रोज़,
गली-गली में करवाते हैं ये मेरा उपहास।

उतने ही वाचाल गीत हैं मैं जितना गम्भीर,
मन के हैं काले ऊपर से दीखें भले फ़क़ीर,
इनसे दर्द कहे मत कोई, ये ऐसे हमदर्द,
जितनी पीर बँटाते करते उससे अधिक अधीर।
ये तो जनम-जनम के छलिया, इनसे कैसा मोह,
जितना अमृत पिलाते उससे अधिक बढ़ाते प्यास।

मैं न बुलाने गया कभी गीतों को इनके द्वार,
ये ही पता पूछते सबसे, आए मेरे पास।

सहज भाव से प्यार करो

मेरी देहरी पर मत तुम पूजा-दीप धरो,
हो सके अगर तो सहज भाव से प्यार करो!

मैं कवि हूँ पर उससे भी पहले मानव हूँ,
इसलिए कहीं मज़बूत और कमज़ोर कहीं,
मैं कभी डूब जाता असहाय सितारे-सा,
मैं कभी उदय होता हूँ बन कर भोर कहीं।
मेरा विश्वास-समर्पित है जन-जीवन को,
तुम मेरी दुर्बलताएँ अंगीकार करो!

मैं कहीं मोड़ देता हूँ दिशा समन्दर की,
मैं कहीं टूट जाता लाचार कगारे-सा,
मेरे जीवन में मरघट का सूनापन है,
मन मेरा दहक रहा पर तप्त अँगारे-सा!
मैं बाँट रहा हूँ अपनी आग ज़माने में,
तुम मुझमें अपनी ज्वाला का संचार करो!

हारी बाँहों को मेरा बहुत सहारा है,
पर मेरी नाव भँवर में डगमग काँप रही,
मैं घर-घर में पूनम का चाँद उगा आया,
मेरे आँगन में मगर अमावस व्याप रही।
मैं हर दीपका को सूर्य बना कर मानूँगा,
तुम मुझमें अपनी किरणों का विस्तार करो!

अधरों में समा गई जड़ता इतना गाया,
इतना बरसा अन्तर की गागर रीत गई,
हो गया भिखारी मैंने इतना दान किया,
मैं इतना हारा सारी दुनिया जीत गई।
पूजन, अर्चन, उपहार देवताओं का है,
तुम मेरा अपनी करुणा से शृंगार करो।

मेरी देहरी पर मत तुम पूजा-दीप धरो,
हो सके अगर तो सहज भाव से प्यार करो!

गत और आगत

जाने वाले का दर्द नहीं मिटता पर,
आने वाले का चाव बहुत होता है।

चलते-चलते जीवन के दोराहे पर,
जब कोई मीत बिछुड़ता है आहें भर,
लहराता पीड़ा का सागर अन्तर में
पर छलक नहीं पाती नयनों की गागर।
लगता जैसे भीतर कुछ टूट गया है,
था एकमात्र जो सम्बल छूट गया है,
पर पास मोड़ के अगले ही जब सहसा
मिल जाता कोई साथी नया-नया है—

स्वागत का भाव निखर आता लोचन में,
यद्यपि गहरा उर-घाव बहुत होता है।

जब कोई फूल मुरझा धरती पर झरता,
मन बहुत बिलखता, रोता, सिसकी भरता,
पर देख नई कलिका खिलती उपवन में
अरमान नया मन में अनजान उभरता।
तुम कह दो शायद यह धोखा है, छल है,
पर मानव-मन का एक यही सम्बल है,
कुछ अपना-सा लगता हर आने वाला
जो चला गया वह बेगाना है, कल है।

गत के प्रति मन का मोह नहीं मिट पाता,
आगत से किन्तु लगाव बहुत होता है।

सौ बार ज़िन्दगी में आता है अवसर,
अधरों पर होता हास, नयन में निर्झर,
मन के उपवन में संग-संग रहते हैं
उल्लास-भरा मधुमास, अश्रुमय पतझर।
जब तक साँसों का कोष न चुक पाता है,
पीड़ा के सम्मुख माथ न झुक पाता है,
तुम कितने ही रोदन के बांध लगाओ,
गायन का मधुर प्रवाह न रुक पाता है।

मातम के सौ-सौ मौन हरा देने को,
सरगम का पहला दाँव बहुत होता है।

दर्द का स्वागत

यह दर्द सभी के द्वार पुकार लगाता है,
केवल स्वागत करने की पद्धति अलग-अलग,
कोई रोकर रह जाता है, कोई हँस कर सह जाता है!
उस दिन शबनम अधखिले फूल से यह बोली—
'मुझे से ज़्यादा है कौन जगत में भाग्य-हीन?
मैं एक अश्रु की बूँद, गगन-दृग से टपकी,
हो गई धूल में और निमिष-भर में विलीन।'
पाँखुरी एक डोली, सहसा ये शब्द हुए—
'आँसू तो सब ही नयन-द्वार तक आते हैं,
कोई बिंध जाता पलकों में, कोई बेबस बह जाता है।'
ऐसा तो कोई व्यक्ति नहीं दुनिया-भर में,
जिसके अन्तर में गहरा दर्द न पलता हो,
ढूँढ़े से ऐसा वक्ष नहीं मिल पाएगा,
भीतर-ही-भीतर जो चुपचाप न गलता हो।
सब ही की छाती पर है भारी बोझ धरा,
कोई रोता है अधर भींच, कोई रो लेता है खुल कर,
फिर जाने क्यों पाषाण एक तो दूजा कवि कहलाता है।
सब ही पाँवों के नीचे ठोस ज़मीन नहीं,
बुनियादें टिकी हुई हैं सबकी ही जल पर,
हर रात बाँह से आँख ढाँप कर रोती है—
चाहे वह बीते काँटों में, चाहे गुज़रे वह मख़मल पर!
हर ताजमहल की नींव गलाती है जमना,
कोई जर्जर होकर भी टूट नहीं पाता,
कोई डगमग हो दो दिन में ढह जाता है।

दिन-रात रीतती जाती गागरिया तन की,
दिन-रात प्राण का शून्य गहराता जाता है,
कब तक आत्मा का अमृत-कलश बच पाएगा?
फन फैलाए विष-सिन्धु लहराता आता है।
सब लगे हुए हैं अपना ग़म झुठलाने में,
कोई अपने को भुला रहा कोलाहल में।
कोई सूने में गा कर मन बहलाता है।
वय के विकास का अर्थ मात्र इतना ही है,
बचपन के बाद जवानी, उसके बाद जरा,
कोई विहंग कितना ही ऊँचा उड़ जाए
आख़िर नज़दीक बुला ही लेती उसे धरा।
जब मिट्टी में मिल कर मिट्टी ही होना है,
जाने क्यों घर में अरथी लाने से पहले
यह जग शव को गंगाजल से नहलाता है?

गीत नया जन्मा

गूँज भरे हरे चरागाहों से
क्षितिजों की ओर गई राहों से
दूर कहीं
घुँघुआते शहरों के
साँवली दुपहरों के आस-पास
गीत नया जन्मा।

बच्चा है
भीड़ भरी सड़कों पर रेंग-रेंग चलता है
दुर्घटनाओं ही के साये में पलता है।
पहियों का कोलाहल
रेलों की सीटियाँ घबरा कर सुनता है
पटरी पर बिछी हुई नौजवान ख़ुदकुशी
चौंक कर निरखता है।
जाने क्या गुनता है।

लिए हुए कुम्हलाए ख़्वाबों का
काग़ज़ी गुलाबों का रिक्त हास
गीत नया जन्मा।

नई परिस्थितियों में
नई मनःस्थितियों का दरपन बन जाएगा
गाएगा नहीं किन्तु तनिक गुनगुनाएगा

तितली को पँख से
फूलों को गँध से
लय को मानवता से
मन को सम्वेदना से जोड़ेगा
लेकिन भावुकता की
रीत गए छन्दों की रूढ़ियाँ
तोड़ेगा।

जीने की शर्तों से जुड़ा हुआ
अँकुराती पीढ़ी का नवप्रयास
गीत नया जन्मा।

सभ्यता नई भाषा सीख रही

शब्द जो तिरस्कृत हैं
अर्थ जो बहिष्कृत हैं
लाओ, हम उन्हें नए गीतों में ढाल दें।

समय जब बदलता है
मोम ही नहीं केवल
लौह भी पिघलता है

हम को क्या लेना है परदेशी केसर से
बूढ़े हिमपात से
सड़ते तालाबों में खिले हुए बासी जलजात से
हम को तो लिखने हैं गीत नए
पिघले इस्पात से।

सदियों की मैली है, दूषित है
चाँदनी
पीने से पूर्व इसे
लाओ, हम छान कर उबाल दें।

जीवन था काव्य कभी
आज मगर गद्य हुआ
सभ्यता नई भाषा सीख रही
गाने के नाम पर चिढ़े हुए बच्चे-सी चीख रही।

ऊपर क्या देखें हम
आसमान काला है
जितना भी जो कुछ भी है, यहीं उजाला है।
अग्निमुखी चाँद हमें परामर्श देता है
रोशनी वहीं है बस
जहाँ-जहाँ क्रेटर है, ज्वाला है।

जीवन को आग नहीं ओसकण बताते जो
लाओ, वे शब्द शब्दकोश से निकाल दें।

निरुद्देश्य यात्राएँ भटक रहीं निर्जन में
मन में हैं श्लोक किन्तु गालियाँ भरी हैं
अवचेतन में
फूल और कीचड़ पर साथ-साथ सोचते
पड़ गई दरारें हर चिन्तन में

प्रस्तुत यदि कर न सकें समाधान
लाओ, हम मुट्ठी-भर प्रश्न ही उछाल दें।

जो नितान्त मेरी हैं

चाहे वे सरस न हों, चाहे वे सफल न हों
मुझ को तो प्यारी हैं वे ही अभिव्यक्तियाँ
जो नितान्त मेरी हैं।

मैंने कुछ तुकें इस तरह जोड़ीं
बड़ी नई लगती हैं
खुरदरी भले हों पर मेरी कुछ कविताएँ
गीतिमयी लगती हैं

चाहे वे झूठी हों, चाहे हों तथ्यहीन
मुझ को तो प्यारी हैं वे ही गर्वोक्तियाँ
जो नितान्त मेरी हैं।

ख्याति के लिए मैंने संधि नहीं युद्ध किया
कुछ सनकों और ज़िदों का दिल खुश करने को
शुभचिन्तक मित्रों को क्रुद्ध किया

चाहे वे कड़वी हों, चाहे वे हों असह्य
मुझ को तो प्यारी हैं वे ही अनुभूतियाँ
जो नितान्त मेरी हैं।

फूलों में मैं गुलाब चुनता हूँ
आख़िर वह कांटों में खिलता है
इसीलिए माता रॉ-सिल्क मुझे
क्योंकि उसे बनुकर के सहज सरल गीतों का

लय-विधान मिलता है।

चाहे वे हों विचित्र, चाहे हों साधारण
मुझ को तो प्यारी हैं वे ही आसक्तियाँ
जो नितान्त मेरी हैं।

भीड़ से अलग

इसीलिए शापित है मेरा अस्तित्व यहाँ
मिले-जुले चेहरों की भीड़ से अलग हूँ मैं।

उकताई शामों के हाथों में
फूलों के दीपक हैं बुझे-बुझे
नहीं, नहीं, अपने ही कमरे की
ख़ुशबू में जाने दो लौट मुझे

दरपनी अकेलेपन, मैं तुझ में झाँकूँगा
धुँधलाए शहरों की भीड़ से अलग हूँ मैं।

जीवन-भर लीक-लीक चलने से
अच्छा है कहीं बन्द हो जाना
छन्दों के साँचे में ढलने से
बेहतर है मुक्तछन्द हो जाना

हाँ, मैं अपने भीतर डूब गया हूँ गहरा
तटवर्ती लहरों की भीड़ से अलग हूँ मैं।

सम्भव है कोई अनसही व्यथा
दे जाए फिर मुझ को जन्म नया
सूर्यमुखी अह्म बहुत काफ़ी है
रहने दो निशिगंधा आत्मदया

कोई अनुभूति विरल मुझ को फिर सिरजेगी
एकरूप प्रहरों की भीड़ से अलग हूँ मैं।

कस्तूरी मृग का आत्मकथ्य

काश, में होता न कस्तूरी हिरन
क्यों भटकते रात-दिन मेरे चरण।

फूल ही होता अगर, खिलता कहीं
प्यास का अभिशाप तो मिलता नहीं
गंध मुझ में भी मगर कितनी विफल
वायु-सा रखती मुझे प्रतिपल विकल

आत्मरति के मन्त्र से मोहित हुआ
कर रहा अपना स्वयं ही अनुसरण।

पार कितनी मंज़िलें मैं कर चुका
किन्तु चुकती ही नहीं यह बालुका
कुछ पता जलस्त्रोत का चलता नहीं
और सूरज है कभी ढलता नहीं

दोहरा सन्ताप यह कैसे सहूँ
कब तलक माँगूँ न छाया से शरण।

यह प्रहर कितना विवश निरुपाय है
स्वप्न आहत, चेतना मृतप्राय है
विषमयी कुण्ठा मुझे डस जाएगी?
सर्पिणी-सी पाश में कस जाएगी?

और कब तक जी सकूँगा इस तरह
चाट कर अपने अहम् के ओसकण?

असमर्पितों का गीत

दुःखों का तो कहना ही क्या
सुख भी हमें उदास लगे।

जन्म हमारा हुआ इसलिए
वीराने आबाद करें
राजभवन को ठोकर मारें फ़ुटपाथों को याद करें।

भाग रही है जाने क्यों
यह भीड़ आइनों के पीछे
शीशमहल में काटे जो दिन, हम को तो वनवास लगे।

यह धूमिल कोहरा अगरु है
धूल हमारा चन्दन है,
आत्मगर्व के लिए क्रॉस पर चढ़ जाना अभिनन्दन है!

जिन की यशगाथा अक्सर
दुहराई है इतिहासों ने
वे इतिहास-पुरुष हम को तो मानव का उपहास लगे।

जिस युग में विज्ञापन
और सुयश में तनिक न अन्तर है
उस युग में सम्मानित होना सब से बड़ा अनादर है।

यों तो हर प्याला मदिरा
या मधु से भर ही जाता है
अमृत किन्तु मिलता उस को ही जिसे अमृत की प्यास लगे।

बादलों-घिरी एक भोर : तीन उद्बोधन

एक

मेघ के पाहुन, बहुत दिन बाद आए।
जिस तरह से कामकाजी ज़िन्दगी में—
एक अरसे बाद कोई याद आए।

आः, बरसे हैं अभी दो-चार ही कन,
सोनजूही की कली-सा खिल गया मन,
धूलिमय परतें दुःखों की धुल गई हैं
स्वच्छ दरपन-सा निखर आया सहज मन।

लीलने को प्राण की चेतन पिपासा,
अब नहीं सम्भव कभी अवसाद आए।
मेघ के पाहुन, बहुत दिन बाद आए।

दो

अब घिरे हो तो बिना बरसे न जाना।
गँध मिट्टी से उठे कौमार्य की जब,
देह धरती की बिना परसे न जाना।

भोर-से गीले करुण युग कर पसारे,
डर नया अँकुर तुम्हारा मुख निहारे,
ये अगर असमय अकारण मर गए तो
बाँध लेगा पाप प्राणों को तुम्हारे।

अब रुके हो तो घड़ी-भर और ठहरो,
जब तलक कोरक नया सरसे, न जाना।
अब घिरे हो तो बिना बरसे न जाना।

तीन

शब्द यह सुकुमार पायल का नहीं है।
दूर से देखो न घन, छू कर टटोलो,
गीत का परिधान मखमल का नहीं है।

है अजब गहरी घुटन वातावरण में,
शूल जड़ता का गड़ा गति के चरण में,
आत्महत्या-सा विवश जीवन हमारा
यंत्रवतता है सभी के आचरण में।

यक्ष के दूतों, यहाँ मत रोकना रथ,
भुखमरों का देश यह, अलका नहीं है।
शब्द यह सुकुमार पायल का नहीं है।

सभी दिशाएँ सूनी हैं

जाएँ कहाँ न सिर पर छत है और न पाँव तले धरती
पूरब-पच्छिम-उत्तर-दक्खिन सभी दिखाएँ सूनी हैं।

ओ मेरे मन, भटक न घर-घर यह नगरी बेगानी है
राहें सभी अजनबी हैं हर सूरत बेपहचानी है
अभी-अभी आवाज़ सुनी जो तू ने उत्सुक कानों से
तेरी ही प्रतिध्वनि लौटी थी टकरा कर चट्टानों से

धीरे-धीरे टूट किसी को कानों-कान पता न चले
यहाँ आत्महत्याएँ वर्जित, मृत जीवन कानूनी हैं।

चारों ओर सिलेटी कुहरा, चारों ओर उदासी है
आधी धरती अनुर्वरा है, आधी धरती प्यासी है
उगे कहाँ पर बीज कि पूरा युग बंजर पथरीला है
आसमान पर मेघ नहीं हैं, सिर्फ़ धुआँ जहरीला है

सुबह चले थे दिन-भर भटके, शाम हुई तो यह पाया
सारी खुशियाँ ख़र्च हो गई और व्यथाएँ दूनी हैं।

साँस न ले, विष घुल जाएगा तेरी रक्त-शिराओं में
सुरभि नहीं, अणुधूलि तैरती है पश्चिमी हवाओं में
चाँद-सितारों तक तुझ को कोई न कभी ले जाएगा
सिर्फ़ अंधेरा अंधगुहाओं में फिर-फिर भटकाएगा

रंगे हुए शब्दों, भड़कीले विज्ञापन पर ध्यान न दे
सभी कल्पनाएँ झूठी हैं, सभी स्वप्न बातूनी हैं।

इस तरह तो

इस तरह तो दर्द घट सकता नहीं
इस तरह तो वक़्त कट सकता नहीं
आस्तीनों से न आँसू पोंछिए
और ही तदबीर कोई सोचिए

यह अकेलापन, अँधेरा, यह उदासी, यह घुटन
द्वार तो हैं बन्द भीतर किस तरह झाँके किरण

बन्द दरवाज़े ज़रा-से खोलिए
रोशनी के साथ हँसिए-बोलिए
मौन पीले पात-सा झर जाएगा
तो हृदय का घाव खुद भर जाएगा

एक सीढ़ी है हृदय में भी महज़ घर में नहीं
सर्जना के दूत आते हैं सभी हो कर वहीं

ये अहम् की शृंखलाएँ तोड़िए
और कुछ नाता गली से जोड़िए
जब सड़क का शोर भीतर आएगा
तब अकेलापन स्वयं मर जाएगा

आइए, कुछ रोज़ कोलाहल भरा जीवन जिएँ
अंजुरी भर दूसरों के दर्द का अमरित पिएँ

आइए, बातून अफ़वाहें सुनें
फिर अनागत के नए सपने बुनें
यह सिलेटी कोहरा छँट जाएगा
तो हृदय का दर्द ख़ुद घट जाएगा।

गजरे का एक फूल

पूजा की माला में कैसे तो गुँथ गया
एक फूल गजरे का
अर्चन के बोलों से आ जुड़ी
मुजरे की एक कड़ी।

गंगा के बीच नहीं
छिछले तालाब में उतरती हैं
मन्दिर की सीढ़ियाँ,
फूल नहीं, दीप नहीं
उन से टकराती हैं
पानों की पीक और बीड़ियाँ।

सामने दुकानें हैं, होटल हैं, बार हैं
जहाँ रोज़ मरती है कोई मोनालिया
फ्रेम में जड़ी-जड़ी।

रेशम के तार और मकड़ी के जाले
कतते हैं साथ-साथ
पार्क में टहलते हैं रूप और पशु दोनों
हाथों में दिए हाथ
कमरों में चलते रोमांस
और बच्चों के वास्ते सड़कें हैं बड़ी-बड़ी!

नीले अंधियार में
जुगनू के साथ सर्प चलते हैं

फैशन की तरह लोग रोज़ घर बदलते हैं
एक-सी मशीनों में
भाषण भी, श्लोक भी, नारे भी ढलते हैं।

सरल नहीं खुद को पहचानना
सहज नहीं धर्म और ईश्वर के अन्तर को जानना
सम्भव अब नहीं रहा
अलग-अलग चीज़ों को अलग-अलग मानना
दूर बड़ी दूर कहीं ज़िन्दगी निकल आई
देती आवाज़ रही चेतना खड़ी-खड़ी।

लावे की नदी

लावे की नदी उमढ़ आई है
सुना नहीं?
बच्चों को कमरे में बन्द रखो

बच्चे ये जिन्हें अभी तितलियाँ बुलाती हैं
बच्चे ये जिन्हें अभी सीपियाँ लुभाती हैं
जिन्हें अभी इन्द्रधनुष बहुत पास लगता है
परियों का स्वप्न मुंदी आँखों में जगता है

लांघ गए देहरी तो देह झुलस जाएगी
कम-से-कम इन पर
प्रतिबन्ध रखो

बाहर अब जुगनू या मोरपंख नहीं रहे
लटकों की धारा में वन-उपवन-नगर बहे
भूखे हैं हरिन कहीं मिल पाती दूब नहीं
झुलस गए कमल, हँस-पाखें सुकुमार दहीं

दुर्लभ हो जाएगा कुछ भी दिन में
इसीलिए
जितना भी हो पाए संचित मकरन्द रखो

पिघला इस्पात उफन आया गलियारों में
बन्दी वह रह न सका यन्त्र के कगारों में
पीतबरन क्षितिज अरुनबरन हैं दिशाएँ

दृश्यों को ढाँप रहीं साँवली हवाएँ

ऐसे में जैसे भी हो पाए
जीवित कुछ शुकपांखी छन्द रखो
बन्द रखो
बच्चों को कमरे में...।

शाम की उदासी और विदा

भीतर है अँधकुआँ, बाहर है सिर्फ़ धुआँ
रमे कहाँ मेरा मन

दूरागत ध्वनियों की गूँज सुनी जाती है
निशि के रीतेपन में
अनदेखे सपनों की
छायाएँ पड़ती हैं झीलों के दरपन में :
झूठे ये सभी वहम, जर्जर सम्पूर्ण अहम
भ्रमे कहाँ मेरा मन

धुँधलाई सड़कों पर कुम्हलाए चेहरे हैं
शाम की उदासी है
घिरती अंधियारी के धूल भरे जूड़े में
गुँथा फूल बासी है
दृश्य सभी उजड़े हैं, रंग सभी उखड़े हैं
जमे कहाँ मेरा मन

अंजुरी में भरे हुए पूजा के पानी-सा
समय बहा जा रहा
आख़िरी विदाई में
तुम से कुछ कहना था, नहीं कहा जा रहा
दीवारें, छतें ढहीं, बुनियादें काँप रहीं
थमे कहाँ मेरा मन।

शाम और निरुत्तर मैं

कॉफ़ी के प्यालों में कब तलक डुबाओगे
अन्तरंग कड़ुआपन
मुझसे यह पूछा है उकताई शाम ने
और मैं निरुत्तर हूँ।

उन्हीं-उन्हीं सड़कों पर रोज़-रोज़ घूमना
बेगाने दृश्यों को आँखों से चूमना
व्यर्थ है, निरर्थक है।

कब तक बहलाएँगी सजी हुई दूकानें
भड़कीले विज्ञापन
मुझ से यह पूछा है घबराई शाम ने
और मैं निरुत्तर हूँ।

थकी हुई आँखों में चुभती है रोशनी
ठंडा अंधियार नहीं
डरे हुए बच्चे की चुप्पी का
कोलाहल कोई उपचार नहीं।

ऊबी तनहाई के वास्ते क्या मतलब रखता है
भीड़ों का सम्मोहन
मुझसे यह पूछा है धुँधलाई है शाम ने
और मैं निरुत्तर हूँ।

केवल कोहरा नहीं
भटकाता पाँवों को क्षितिज स्वयं,
और भी निरीह बना देता है व्यक्ति को
क्षुद्र अहम्।

आरोपित गीतों से कब तक झुठलाओगे
सहजन्मा सूनापन
मुझ से यह पूछा है साँवलाई शाम ने
और मैं निरुत्तर हूँ।

अधूरी समाप्तियाँ

सब समाप्त हो जाने के पश्चात् भी
कुछ ऐसा है
जो कि अनहुआ रह जाता है

चलते-चलते राह कहीं चुक जाती है
लेकिन लक्ष्य नहीं मिलता
चाहे रखो उसे जल में या धूप में
किन्तु फूल कोई दो बार नहीं खिलता

खिले फूल के झर जाने के बाद भी
शामग्रस्त सौरभ उस का
किसी डाल के आसपास मंडराता है

अच्छा, मैंने मान लिया
अब तुम से कुछ सम्बन्ध नहीं
पर विवेक का लग पाता मन पर सदैव प्रतिबन्ध नहीं

अक्सर ऐसा होता है
सब ज़ंजीरें खुल जाने के बाद भी
क़ैदी अपने को क़ैदी ही पाता है

मृत्यु किसी जीवन का अन्तिम अन्त नहीं
साथ देह के प्राण नहीं मर पाते हैं
दृष्टि रहे न रहे कुछ फ़र्क़ नहीं पड़ता
चक्षुहीन को भी तो सपने आते हैं

सभी राख हो जाने के पश्चात भी
कोई अंगारा ऐसा बच जाता है
जो भीतर-भीतर रह-रह धुँधआता है

सब समाप्त हो जाने के पश्चात भी...।

जीवन-क्रम

घिस गए सभी मंसूब इस जीवन के
दफ़्तर की सीढ़ी चढ़ते और उतरते।

जो काम किया वह काम नहीं आएगा
इतिहास हमारा नाम न दुहराएगा
जब से सपनों को बेच खरीदी सुविधा
तब से ही मन में बनी हुई है दुविधा

हम भी कुछ अनगढ़ता तराश सकते थे
दो-चार साल समझौता अगर न करते।

पहले तो हम को लगा कि हम भी कुछ हैं
अस्तित्व नहीं है मिथ्या हम सचमुच हैं
पर अकस्मात ही टूट गया यह सम्भ्रम
ज्यों बस आ जाने पर भीड़ों का संयम

हम उन काग़ज़ी गुलाबों-से शाश्वत हैं
जो खिलते कभी नहीं हैं, कभी न झरते।

हम हो न सके वह जो कि हमें होना था
रह गए संजोते वही कि जो खोना था
यह निरुद्देश्य, यह निरानन्द जीवन-क्रम
यह स्वादहीन दिनचर्या, विफल परिश्रम

चेहरे का सारा तेज निचुड़ जाता है
फाइल के कोरे पन्ने भरते-भरते।
हर शाम सोचते नियम तोड़ देंगे हम
यह काम आज के बाद छोड़ देंगे हम
लेकिन जाने वह कैसी है मज़बूरी
जो कर देती है आना यहाँ जरूरी

ख़ाली दिमाग़ में भर जाता है कूड़ा
हम नहीं भूख से, ख़ालीपन से डरते।

विकल्प

या बबूल की करो प्रशंसा और उसे वटवृक्ष कहो
या फिर जहाँ खड़े हो साथी, धूप सेकते खड़े रहो
जीने का अन्दाज़ तीसरा मुझ को तो मालूम नहीं।
सच है झूठ बोलने में तकलीफ़ शुरू में होती है
यह भी एक हुनर है जो आते-आते ही आता है
कुछ भी करो मगर ऐसे अवसर आ ही जाते हैं जब
अपना सच्चा क्रोध छिपाना नामुमकिन हो जाता है
या अनुगूँज पराई बन कर यहाँ-वहाँ जम कर गूँजो
या भोगो अपमान, मज़े से अपनी ज़िद पर अड़े रहो
जीने का अन्दाज़ तीसरा मुझ को तो मालूम नहीं।
संस्कार क्या है, अतीत का एक फ़ालतू टुकड़ा है
जिसे क़ीमती समझ नासमझ लोग संजोए रहते हैं
ठोस धरातल पर वह हम को पांव नहीं रखने देता
हम बेकार किसी स्वप्निल दुनिया में खोए रहते हैं
युग-शिल्पी की कर सराहना रहो आधुनिक बंगले में
या फिर जहाँ पड़े हो साथी, धूल फाँकते पड़े रहो
जीने का अन्दाज़ तीसरा मुझ को तो मालूम नहीं।
प्रतिभा होती तो हैं लेकिन सिर्फ़ संगठन वालों में
पंक्ति छोड़ चलने वाले में महज़ सनक हो सकती हैं
स्वाभिमान है नाम कवच का जिसे विफलता धारण कर
कुँठाओं के अँधकार में सो सकती, रो सकती है
समाचार-पत्रों में चमको, इससे या उससे जुड़कर
या अपने ही कमरे में अपनी तस्वीरें जड़े रहो
जीने का अन्दाज़ तीसरा मुझ को तो मालूम नहीं।

पी जा हर अपमान

पी जा हर अपमान, और कुछ चारा भी तो नहीं!

तू ने स्वाभिमान से जीना चाहा यही ग़लत था
कहाँ पक्ष में तेरे किसी समझ वाले का मत था
केवल तेरे ही अधरों पर कड़वा स्वाद नहीं है
सब के अहंकार टूटे हैं तू अपवाद नहीं है

तेरा अफसल हो जाना तो पहले से ही तय था
तू ने कोई समझौता स्वीकारा भी तो नहीं!

ग़लत परिस्थिति ग़लत समय में, ग़लत देश में होकर
क्या कर लेगा तू अपने हाथों में कील चुभो कर
तू क्यों टंगे क्रॉस पर तू क्या कोई पैग़म्बर है
क्या तेरे ही पास अबूझे प्रश्नों का उत्तर है

कैसे तू रहनुमा बनेगा इन पागल भीड़ों का
तेरे पास लुभाने वाला नारा भी तो नहीं।

यह तो प्रथा पुरातन दुनिया प्रतिभा से डरती है
सत्ता केवल सरल व्यक्ति का ही चुनाव करती है
चाहे लाख बार सिर पटको दर्द नहीं कम होगा
नहीं आज ही, कल भी जीने का यह ही क्रम होगा

माथे से हर शिकन पोंछ दे, आँखों से हर आँसू
पूरी बाज़ी देख अभी तू हारा भी तो नहीं!

टूट गए सभी वहम

टूट गए सभी वहम और ग़लतफ़हमियाँ
अच्छा ही हुआ चलो जीवन अब
चैन से गुज़ारूँगा।

कैमरा रुका मुझ पर लेकिन फिर हट गया
कीर्त्तिवान लोगों की सूची में
लिखा गया मेरा भी नाम
मगर कट गया

संधिगान को मैंने अपना स्वर नहीं दिया
मुझ को जो काम नहीं रुच पाया नहीं किया
जीवन-भर नहीं किया

टूट गए सभी वहम और ग़लतफ़हमियाँ
लेकिन ज़िद बाक़ी है
जिस दिन यह टूटेगी उस दिन ही हारूँगा।

ग्लैमर का नशा टूटता है जब
बड़ी थकन होती है
आँखों में स्वप्न नहीं, अश्रु नहीं
सिर्फ़ चुभन होती है।

सुनने के नाम पर सुनना बस अपना स्वर
करने के नाम पर करना बस हस्ताक्षर
मैंने यह जीवन-क्रम चुना नहीं

मुझ को भी दर्पण ने कई बार बहकाया
पर मैंने सुना नहीं

जिन को यह धूमधाम भाती है, भोगें वे
मैं तो इन भीड़ों से दूर चला जाऊँगा
और फिर अकेले में स्वयं को पुकारूँगा।

अप्रसिद्ध रहने में कितना आराम है
अपनी ही सुबह और अपनी ही शाम है
चाहो तो शोर करो, मन हो तो मौन रहो
प्रश्न अगर रुचे नहीं उत्तर में कुछ न कहो

बहुत मज़ा देते हैं
छोटे सुख मामूली सुविधाएँ
इन के ही लिए सदा बाँह मैं पसारूँगा।

यह मुझ को क्या हुआ

यह मुझ को क्या हुआ
जब भी मैं लेता हूँ नाम किसी फूल का
बिंधी हुई उँगली का दर्द उभर आता है

जब भी मैं छन्दहीन नगरों के मंच से
सुनता हूँ लोकगीत
मुझ को यह लगता है :
किसी रेल के नीचे हिरनों का झुंड एक आ गया
रक्त हरा पटरी पर छा गया

यह मुझ को क्या हुआ
जहा-जहाँ बोने थे मुझ को संकल्प-बीज
वहाँ-वहाँ सपने दफ़नाता हूँ
भीड़ से गुजरता हूँ अनछुआ
किन्तु मैं अकेले में खुद से टकराता हूँ

यह मुझ को क्या हुआ
जब भी मैं करता हूँ ध्यान किसी रेशमी दुकूल का
आँख से पके फल-सा आँसू झर जाता है।

तारकोल में लिथड़ी औरतें, गारे में सने हुए मर्द
नए-नए शहरों की रचना में व्यस्त हैं
सभी जगह टंगी हुई नेम-प्लेट बुड्ढों की
नौजवान त्रस्त हैं
इतने सब शहरों का क्या होगा

मात्र एक घृणा भरे शब्द से मरता है आदमी
इन सारे ज़हरों का क्या होगा

यह मुझ को क्या हुआ
जब भी मैं करता अनुवाद किसी मूल का
कोई सन्दर्भ बिखर जाता है।

रंग सभी मिल कर ज्यों निश्चित अनुपात में
हो जाते हैं सफ़ेद
वैसे ही आज सभी संस्कृतियों ने मिल कर
पशु-संस्कृति जन्मी है

इसीलिए हर मनुष्य गुर्राता
या कि दुम हिलाता है
मौलिक के नाम पर खुद को दुहराता है

यह मुझ को क्या हुआ
जब भी मैं करता प्रतिकार किसी भूल का
मुझ में ही मेरापन थोड़ा मर जाता है।

आवाज़ वे देते रहे

यों तो बहुत संसार ने रौंदा मुझे, तोड़ा मुझे
फिर भी कहीं कुछ लोग हैं जो चाहते थोड़ा मुझे।

चाहे उन्हें मैंने कभी देखा न हो, जाना न हो
जलसे-सभा की भीड़ मैं तत्काल पहचाना न हो
लेकिन मुझे लगता रहा हर रात के सुनसान में
कुछ लोग हैं जागे हुए मेरे हितों के ध्यान में
मुझ से न उनको काम कुछ, उनसे न मुझको काम कुछ
उन से न जाने कौन से सम्बन्ध न जोड़ा मुझे।

चाहे बहुत ज़्यादा न हों, निरुपाय तो बिल्कुल नहीं
साधन न उनके पास हों, असहाय तो बिल्कुल नहीं
उनके लिए भी ज़िन्दगी खोई हुई पहचान है
जीना बहुत दुश्वार है, मरना बड़ा आसान है
शायद उन्हें भी टूटने की यातना का ज्ञान है
वे दर्द से थर्रा उठे जब-जब पड़ा कोड़ा मुझे।

वे चाहते हैं मैं कभी घुटने कहीं टेकूँ नहीं
चाँदी मढ़ी मीनार को नज़रें उठा देखूँ नहीं
मैं कर सकूँगा यह, न जाने क्यों उन्हें विश्वास है
जो पास मेरे भी नहीं, वह आग उनके पास है
उस छोर से भी दूर से आवाज़ वे देते रहे
जिस छोर के नज़दीक हर पथ-चिह्न ने छोड़ा मुझे।

लम्बी कविताएँ

मृत शिशु के जन्म पर

एक पल
बस एक पल
जल
दीपिका की ओर बुझी लौ,
फिर मचल,
तेरी पवन-सी थरथराती ज्योति में पढ़ लूँ तनिक मैं
हाथ की रेखा,
चमक कर फैसला मुझ को सुना दे
माथ का लेखा!

आज तक मैंने सुना
हर साँस के रथ की चरम मंज़िल मरण की गोद होती,
जन्म लेकर हैं सभी मरते
मगर हा लाल! यह कैसा नियति का व्यंग्य तीखा
तू मुझे उपहार में बेजोड़ पीड़ा के
सृजन की भेंट होकर भी
अचेतन, जड़ मिला है;
अंक में खिल कर चमन के फूल मुरझाते सभी
पर
तू मुरझ कर डाल के उर पर खिला है,
जन्म लेने से प्रथम ही मर चुका है।
देख मेरे चाँद, मेरे लाल,
मेरे इन सुलगते आँसुओं को देख,
बनना चाहते तेरे गले की माल
मेरे इन प्रकम्पित बाहुओं को देख,

फूटा पड़ रहा मेरे उरोजों से
अछूते दूध का निर्झर,
बता, किसके अधर पर झर सकेगा?
वक्ष के इस बेफटे ज्वालामुखी में खौलती लावा सरीखी
उर्वरा ममता
बता भी कौन इस को वर सकेगा?
कौन निशि की आख़िरी घड़ियाँ सरीखी शून्यता
मेरी कुंआरी गोद की कह, भर सकेगा?

दृष्टि यदि लाया नहीं तो नयन भी लाया बता क्यों?
गोद भरनी ही न थी मेरी तुझे यदि
गोद में आया बता क्यों?
यदि न मुझको माँ कहाना था
बता क्यों कोख में मेरी पला नौ मास तक,
नौ मास तक
मेरे हृदय को गुदगुदाया भी बता क्यों?

हूँ नहीं मैं बांझ फिर भी माँ नहीं हूँ!
उर्वरा हूँ
गोद में पर प्राण की कलिका न विकसी
साँस की लतिका न उग पाई!
कैसा यह नियति का व्यंग्य मुझ पर
हूँ नहीं मैं बांझ फिर भी माँ नहीं हूँ!
चाँदनी हूँ किन्तु रेगिस्तान की बेजान
जिसकी गोद से है ऊर्मियों का नाद उतनी दूर
जितनी दूर है खिलती सुबह से शाम!

मेरे स्निग्ध आँचल से
फिसल कर गिर गया मघुमास,
मुरझाया हुआ
रोता बिलखता रह गया पतझार!

मेरे प्रणय की पहली निशानी बोल,
मेरे सृजन की असफल कहानी बोल,
ले कर कौन-सा मुख मैं सजन के पास जाऊँगी?
(विकल पल-पल डगर पर
जो नज़र के फूल बरसाते खड़े होंगे,
जिन्हें पल-पल युगों-सा खल रहा होगा,
कि जिनके लोचनों को
एक खिलते फूल का सपना सुकोमल छल रहा होगा।)
उन्हें उत्तर बता दे लाल मेरे, कौन दूँगी मैं,
बता क्या मौन जीवन-भर रहूँगी मैं,
उपेक्षा की कसक सहूँगी मैं,
बता भी,
क्या कहूँगी मैं?

तेरी देह-लतिका पर छिड़क दूँ मैं अगर शबनम कि अपने प्राण की
ओर पुत्र मेरे, फिर खिलेगा?
ज़िन्दगी-भर अश्रु-धारा में गलूँगी
किन्तु तेरे अधर-सागर को हँसी का ज्वार मैं दूँगी
बता दे फिर हँसेगा?
कौन कहता है कि तुझमें स्वर नहीं है,
गीत मुझ से ले
विहंस,
गा,
पास आ,
उर से लगा लूँ मैं तुझे कस कर
तुझे अब छीन कर कोई न ले जाए।

सुनाई दे रही पग-चाप किसकी
कौन तम में यह चला आता,
बढ़ाता हाथ अपना
(रुधिर जिससे टपकता ताज़ा!)

कि जिसकी आँख में शोले चमकते हैं,
कि जिसके ओठ पर लपटें दमकती हैं,
कि मेरी गोद से प्रिय की निशानी छीनता है कौन?

आओ मत इधर
चुपचाप दूजे रास्ते से लौट जाओ,
पुत्र को मेरे न छूना,
वह मरा कब है, अभी सोया हुआ है।

(जागते हो तुम?
सुनो प्राणेश मेरे,
आज मैंने यह नई ही गाँठ बाँधी मोह की तुमसे
तुम्हारे वास्ते यह फूल जन्मा है,
तुम्हारे वंश का रक्षक,
जरा धीरे छुओ,
चुपचाप देखो,
ठीक तुम पर ही गया है ना?)

अजन्ता की कलाकृतियों के नाम

ओ अजन्ता की कलाकृतियों,
सपन के देश की परियों सरीखा रूप लेकर
तुम यहाँ चिर सत्य की अनमोल धरती पर
उतर आईं भला कैसे!
बताओ, कौन से युग, कौन वैभव की धरोहर हो?
नयन खिंचते है तुम्हारी ओर बरबस ही
मगर पलकें लजाकर अवनि पर चुपचाप झुक जातीं।

कहाँ तुममें तथागत की तपस्या
और संयम भिक्षुओं का
कम पीड़ित तुम, तुम्हें मानव-हृदय की
सूक्ष्मतम अनुभूतियों से वास्ता क्या है?
तुम्हें मेरी क़सम इतना बता दो,
व्यक्ति की अभिव्यक्ति हो तुम
या कि तुममें बोलता है युग तुम्हारा,
विश्व सारा?
हो किसी सम्राट की उद्दाम, उत्कट वासना की तुम निशानी
या कि जन-जन के हृदय की तुम कहानी हो?

तुम्हारे नयन में जो रंग प्यासी वासना का झिलमिलाता है
तुम्हारे स्वर्ण अधरों से
सहस्रों चुम्बनों की गँध जो उगती
तुम्हारे वक्ष पर यह अँगुलियों की छाप जो सहसा झलक जाती
तुम्हारी देह की सौ-सौ दरारें
कौन से युग-सत्य से परदा उठाती हैं?

नग्न हो सकता रजत है
पर धरा नंगी कभी होती नहीं है।
फूल का, कोमल कली का, वृक्ष, पौधे छाल वल्कल का
नहीं तो धूल का ही, शूल का ही
वस्त्र निज तन से लपेटे
सिकुड़ती संकोच करती, युग-युगों से वह चली आई
कभी दुकान पर बैठी नहीं
बाज़ार में नाची नहीं है!

नग्न हो सकता स्वयं सम्राट
पर जनता कभी नंगी नहीं होती,
इसी से नग्न हो तुम क्योंकि तुम 'जनता' नहीं हो
हो 'अ-जनता',
देखने से लाज लगती है तुम्हारी ओर!

बोलो, साथर्क करतीं कला की कौन परिभाषा भला तुम?
रूप को आकार देना ही कला है?
प्यार को आधार देना ही कला है?
क्या कला है मात्र वह ही
कल का जो तीर खाकर छटपटाती हो?
क्या कला है सिर्फ़ वह ही
रात भर जो द्वार पर रति के निरन्तर खटखटाती हो?
कला क्या नुपूरों को शब्द देकर ख़त्म हो जाती?
कला क्या देवताओं को, सुरों को अर्ध्य देकर ख़त्म हो जाती?
कला क्या ख़त्म हो जाती किसी की वासना को रूप देकर
कला पीड़ित मेनका के छद्म को अभिव्यक्ति देकर?

और वे जो प्रातः से निशि तक बराबर जूझते श्रम से
सुबह से शाम तक निर्माण करते हैं?
कला के वास्ते रोटी उगाते हैं
कला के वास्ते कपड़ा बनाते हैं

जिन्होंने ख़ून से अपने धरा की माँग सींची है,
जिन्होंने घर बनाए हैं
सबल दीवार खींची है
जिन्होंने मनुजता के वास्ते
निज प्राण की बाज़ी लगाई
रप्त जगते ही बिताई,
जगत का भार अपने वक्ष पर चुपचाप सहते हैं,
कभी कुछ चाहते रहना विवश पर मूक रहते हैं
किं उनके मौन को आवाज़ देना क्या कहोगी तुम?
कि उनके गीत को निज साज़ देना क्या कहोंगी तुम?

कला क्या वह नहीं है ज़िन्दगी जिसमें पुलक के गीत गाती है
कि मिट्टी मुस्कराती हो?
सपन श्रम के स्वयं साकार होते हों?

अजन्ता की कलाकृतियों,
कहो, युग में तुम्हारे क्या बिना
जल-बीज के बोए
धरित्री लहलहाती थी?
कुदाली का अछूता प्यार ठुकरा
क्या धरा गेहूँ, चना, जौ, बाजरा बनकर निखरती थी?
बिना मज़बूत हाथों के रखे बुनियाद
क्या कोई इमारत तब उभरती थी?

तुम्हारा यह मधुरतम रूप मुझको देखना कब है?
दिखाओ, तुम मुझे निर्माण की बाँहें दिखाओ!
स्वर्ग के इन देवताओं से कहो
तुम लौट जाएँ वे
दिखाओ, तुम मुझे इन्सान की बाँहें दिखाओ!

ओ अजन्ता की कलावृत्तियों,
तुम्हारा हाथ यह
जिसमें रची मेंहदी अमर सोहाग की असलियत,
निगाहों में कभी मेरी न खुब सकता,
तुम्हारी यह सुकोमल पाँव
जो मृदु फूल के भी चुम्बनों से काँप उठता है
सिहर कर डगमगा जाता,
किन्हीं अनजान राहों की कहानी क्या सुनाएगा?
तुम्हारी आँख का काजल,
किसी युग-सत्य के ऊपर पड़ा परदा
कि जिस पर मकड़ियाँ होंगी कभी की बुन चुकी जाले
उठाने में सफल होगा?
तुम्हारे प्रेम पत्रों में
किसी के बे-लिखे आँसू भला क्या पढ़ सकूँगा मैं?
किसी की अनकही बातें
हृदय के द्वार पर सिर मार पाएँगी

छुपा लो तुम,
छुपा लो, तिमिर के तारीक परदे में
नज़ाकत यह
नशीले रंग
प्रथम अभिसार की उन्मत्त आतुरता
तड़प यह
डूबा जाओ,
डूब जाओ, तुम कहीं अज्ञात सागर में!
उभरने दो निगाहों में अभी वे हाथ
जिनमें कसमसाते हों नए छाले
लहू के लाल धब्बे मुस्कराते हों,
कुदाली की जवानी गीत गाती हो!
उभरने दो चरण वे
शूल की नोकें जड़ी हों अब तलक जिनके अंगूठों में!

ओ अजन्ता की कलाकृतियों,
रहो अपने सुकोमल आँचलों में
फूल तुम विश्राम के बाँधे
जलाए दीपिका रति की,
अगर गति का नुकीला शूल हो कोई तुम्हारे पास
मेरे पाँव में उसको गड़ा दो,
भर सके जिससे कि वह सिन्दूर क्वांरी माँग में
अनजान राहों की,
मुझे निर्माण से पहचान करनी है!

द्वाभा

सरगोशियाँ

खिला कहीं सूने में फूल एक
अनचीन्हा, अनदेखा
किन्तु गंध सारे ही उपवन में व्याप गई।
इसी तरह गीतों की ख़ुशबू भी
दूर-दूर जाती है।

इसीलिए चाहे हम कुछ न करें
केवल यह ज़िक्र करें, बात करें–
अँधियारा अब न सहा जाता है,
कमरों में अब न रहा जाता है,
घेरों से निकलें हम
आओ, युग बदलें हम
सुनो, सुनो द्वार खड़ा सूर्य थाप देता है!

मित्रो, विश्वास करो,
ख़ुशबू की तरह यही बात फैल जाएगी!

छोटे पैमानों पर किए गए कामों का
बड़ा असर पड़ता है,
वातावरण इन्हीं आम सहज बातों से
बनता या कि बिगड़ता है।

प्यार धनवान है, उदार नहीं

हर किसी आँख में खुमार नहीं
हर किसी रूप पर निखार नहीं
सब के आँचल तो भर नहीं देता
प्यार धनवान है, उदार नहीं

सिसकियाँ भर रहा है सन्नाटा
कोई आहट, कोई पुकार नहीं
क्यों न कर लूँ मैं बन्द दरवाज़े
अब तो तेरा भी इन्तज़ार नहीं

पर झरोखे की राह चुपके से
चाँदनी इस तरह उतर आई
जैसे दरपन की शेख बाँहों में
काँपती हो किसी की परछाईं

मैंने चाहा कि डूब जाऊँ पर
अनदिखे हाथ ने उबार लिया
मेरे माथे की सिलवटों को तभी
गीत के होंठ ने सँवार दिया

एक नटखट अधीर बच्चे-सी
कुछ बहाना बना ही लेती है
रूठिए लाख गुदगुदा के मगर
ज़िन्दगानी मना ही लेती है।

ये चिराग़ तेरे हैं

जहान भर के सभी काम भूल जाता हूँ
कि अपने प्यार का अंज़ाम भूल जाता हूँ
कभी-कभी मैं तेरा नाम भूल जाता हूँ

गुलों में तुझको ये शायर गुलाब कहते हैं
कि आइनों में तुझे लोग आब कहते हैं
कि पीने वाले तुझी को शराब कहते हैं

तेरे लिबास में रातों की सिलवटें भी हैं
तेरे क़दम में सवेरे की आहटें भी हैं
कि दिल में तेरे मुहब्बत की करवटें भी हैं

तेरी गली में जो दो दिन गुज़ार आया है
वो एक बार नहीं बार बार आया है
तबाह हो के या ले कर बहार आया है

हज़ार नाम हैं तेरे हज़ार चेहरे हैं
तुझी को घेर के हर ओर लोग ठहरे हैं
तेरी क़िताब के अक्षर सभी सुनहरे हैं

ये रोशनी है तेरी, ये चिराग़ तेरे हैं
ये दिल तो ख़ैर तेरे थे, दिमाग़, तेरे हैं
मगर ये आज क्यों दामन पे दाग़ तेरे हैं

कई दिनों से मुझे तू उदास लगती है
मेरे क़रीब है लेकिन न पास लगती है
ये आम बात नहीं कोई ख़ास लगती है

ये सच है ज़िन्दगी, कुछ लोग तुझ से डरते हैं
चुरा के आँख तेरी राह से गुज़रते हैं
मगर ये सच है कि कुछ लोग तुझ पे मरते हैं

मशीन बन के मशीनों से हार बैठे हैं
ये दिल की चीज़ दिमाग़ों पे वार बैठे हैं
मगर ये लोग बहुत बेक़रार बैठे हैं

ये चन्द लोग तुझे फिर से मुहब्बत देंगे
ये अपने घर में तुझे प्यार की दावत देंगे
ये तेरी सर्द निगाहों को हरारत देंगे

तेरे क़रीब ये आएँगे ज़िन्दगी, मत रो
तुझे ज़रूर बुलाएँगे ज़िन्दगी, मत रो
तुझे निजात दिलाएँगे ज़िन्दगी, मत रो

तेरे लिए ये नए ख़्वाब बुन रहा हूँ मैं
तेरे लिए ये हँसी फूल चुन रहा हूँ मैं
तेरे भविष्य की आवाज़ सुन रहा हूँ मैं

तेरे ही नूर से ज़िन्दा हूँ, जगमगाता हूँ
ये और बात है जब ग़म से छटपटाता हूँ
तभी तभी मैं तेरा नाम भूल जाता हूँ

कभी-कभी मैं तेरा नाम भूल जाता हूँ।

कवि का पत्र प्रेमिका के नाम

आह, कितनी हसीन थीं रातें
जो तड़पते हुए गुज़ारी थीं,
तुम न मानो मगर यही सच है
मुझसे ज्यादा तो वे तुम्हारी थी!

थपथपाता था द्वार जब कोई
आ गईं तुम गुमान होता था,
उन दिनों कुछ अजीब हालत थी
जागता भी न था, न सोता था।

भोर आए तो यों लगे मुझको
यह तुम्हारा सलाम लाई है,
दिन जो डूबे तो सोचता था मैं
तुमने भेजा तो शाम आई है।

आह, वे नीम के घने साए
हम जहाँ छिपके रोज़ मिलते थे,
देख मुझको तुम्हारी आँखों में
कितने ताज़ा गुलाब खिलते थे!

और कॉलिज के लॉन की वह दूब
छू तुम्हें किस कदर महकती थी,
रूप का प्राण, वह तुम्हारा या
तेज की लालिमा दहकती थी।

किस कदर दिल फ़रेब, लगता था
नीली आँखों में सुरमई काजल,
सांवले केश गौर मुख पर ज्यों
बर्फ़ छाए पहाड़ पर बादल।

शेक्सपीयर का ज़िक्र था शायद
तुमने मुझसे कहा था शरमा कर—
ज़िन्दगी कितनी बेमज़ा होती
जन्म लेते नहीं अगर शायर।

तुम अगर मुझसे प्यार करते हो
एक कविता मुझे नज़र कर दो,
छन्द में गूँथ लो सुमन की तरह
हो जो शायर मुझे अमर कर दो!

यह तो औरत की ख़ास आदत है
जो वह कहती न खुद समझती है,
ज़िन्दगी के यथार्थ से तो कम
कल्पना से अधिक उलझती है।

और उस रोज़ यह सुना मैंने
ज़िन्दगी ने तुम्हें भी बींध दिया
आँसुओं में न डूब पाईं तुम
और सुख ने तुम्हें खरीद लिया।

वक़्त की मार सह नहीं सकता
प्यार तो रेत का घरौंदा है,
जो भी चाहे ख़रीद ले इसको
आदमी सिर्फ़ एक सौदा है।
मैं न तुमको खरीद सकता था
क्योंकि मैं तो स्वयं बिका ही नहीं,

जिसकी क़ीमत हज़ार रुपए हो
गीत ऐसा कोई लिखा ही नहीं।

तुमको शीराज़ की निगाहों से
ताज ज़्यादा हसीन लगता था,
तुमको भाती थीं रेशमी कलियाँ
और मैं आग था, सुलगता था।

मुझको तुमसे न कुछ शिकायत है
किन्तु इतना ज़रूर कहता हूँ,
घर जो तुमने स्वयं सजाया था
मैं वहाँ अजनबी-सा रहता हूँ।

हर तरफ़ दर्द है उदासी हैं
अब तो खुद से ही ऊबता है दिल,
इतना ज़्यादा गहन अंधेरा है
हाय! रह-रह के डूबता है दिल।

बस यही आख़िरी तमन्ना है
मैं मिटूँ किन्तु तुम सँभल जाओ,
पत्र यह भेजता तुम्हीं को हूँ
हो सके तो ज़रा बदल जाओ।

प्रेमिका का पत्र कवि के नाम

पत्र मुझको मिला तुम्हारा कल
चाँदनी ज्यों उजाड़ में उतरे,
क्या बताऊँ मगर मेरे दिल पर
कैसे पुरदर्द हादसे गुज़रे।

यह सही है कि हाथ पतझर के
मैंने तन का गुलाब बेचा है,
मन की चादर सफ़ेद रखने को
सबसे रंगीन ख़्वाब बेचा है।

जितनी मुझसे घृणा तुम्हें होगी
उससे ज़्यादा कहीं मलिन हूँ मैं,
धूप भी जब सियाह लगती है
एक ऐसा उदासा दिन हूँ मैं।

तुम तो शायर हो ज़िन्दगी सारी
बेख़ुदी में गुज़ार सकते हो,
सिर्फ़ दो-चार गीत ही देकर
प्यार का ऋण उतार सकते हो।

किन्तु नारी के वास्ते जीवन
एक क़विता नहीं, हक़ीक़त है,
प्यार उसका है बेज़ुबा सपना
आरज़ू एक बेलिखा ख़त है।

माँ की ममता कि बाप की इज़्ज़त
इनसे लड़ना मुहाल होता है,
और छोटी बहिन की शादी का
सामने जब सवाल होता है।

एक बेनाम बेबसी सहसा
सारे संकल्प तोड़ जाती है
हर शपथ की नरम कलाई को
गर्भ शीशों-सा मोड़ जाती है।

अपने परिवार की ख़ुशी के लिए
मैं जो क़ुर्बान हो गई हँसकर,
ठीक ही तो है मैं बहुत ख़ुश हूँ
होंठ भींचे हूँ क्योंकि मैं कसकर।

अपनी ख़ामोश सिसकियों का स्वर
तुम तो तुम मैं भी सुन नहीं सकती,
प्यार का शूल यों चुभा कर मैं
ब्याह के फूल चुन नहीं सकती।

रेशमी हो कि हो गुलाबों का
पींजरा सिर्फ़ पींजरा ही है,
यों तो हँसती हूँ, मुस्कराती हूँ
घाव दिल का मगर हरा ही है।

मेरे कँधे पे, टेक कर माथा
हर सुबह फूट-फूट रोती है,
दोपहर है कि बीतती ही नहीं
मेरी हर शाम मौत होती है।

है कठिन एक ज़िन्दगी जीना
दोहरी उम्र जी रही हूँ मैं,
मुझको जो कुछ न चाहिए होना
हाय, केवल वही, वही हूँ मैं।

तुमने मुझको जो गीत के बदले
एक जलती मशाल ही होती,
तो बियाबान रात के हाथों
क्यों जवानी मेरी बिकी होती!

किसको भाता न घूमना जीभर
रोशनी की विशाल वादी में,
चाहता कौन है कि मुरझाए
उसकी ताज़ा बहार शादी में।

मुझसे नाराज़ हो तुम्हें हक़ है,
किन्तु इतना तो फिर कहूँगी मैं,
यह न मेरा चुनाव क़िस्मत है
सिर्फ़ यह ही, यही कहूँगी मैं।

चाहते हो मुझे बदलना तो
ख़ुदक़ुशी के रिवाज़ को बदलो,
दर्द के सामराज को बदलो
पहले पूरे समाज को बदलो।

भूख के धान

जब किसी बाग़ पे पड़ती है बिजलियों की नज़र,
जब किसी फूल के रुख़ पर मलाल आता है,
दिल ये होता है कि दुनिया से बग़ावत कर दूँ,
पर तेरे हाथ की चूड़ी का ख़याल आता है।
मैं दहकते हुए अँगार से भयभीत नहीं,
पर तेरी माँग के सिन्दूर से डर लगता है,
प्यार कमज़ोर बना देता है कितना दिल
तीर का ठहरा हुआ नीर भँवर लगता है।
तेरी अलकों में गुँथा फूल न मुरझाया है,
ब्याह की रात का जोड़ा न उतारा है अभी,
हाथ की मेंहदी अभी लाल है होठों की तरह,
तू ने शबनम से धुला रूप सँवारा है अभी।
तेरी आँखों से अभी लाज का कुकुंभ न धुला,
तेरी शोख़ी ने अभी आँख नहीं खोली है,
तू ने सीखा ही नहीं कोई शरारत करना
तू किसी गाँव की लड़की-सी अभी भोली है।
तू ने समझा है अभी सिर्फ़ यही जीवन में :
मुग्ध कोयल के मधुर बैन भले लगते हैं,
यह कि पीले पे हरा रंग बहुत फबता है,
यह कि काजल से अजे नैन भले लगते हैं।
बुनतियाँ कौन-सी स्वैटर में नई निकली हैं,
यह कि ब्लाउज़ के डिज़ाइन में नयापन क्या हो,
यह कि सब्ज़ी में नमक तेज़ न हो जाए कहीं,
यह कि खो जाए अगर हाथ का कंगन, क्या हो।

तू ने दुनिया में अभी सिर्फ़ यही जाना है,
जब गरजते हैं सघन मेघ हृदय डरता है,
तुम को मालूम है इतना ही सहेली को तेरी
उस के भाई का कोई दोस्त प्यार करता है।
तू ने उस शाम के दम तोड़ते सन्नाटे में,
मेरी पुरदर्द कहानी को सुना ही क्यों था,
जगमगाते हुए तारों के नुमाइशघर में,
एक टूटे हुए दरपन को चुना ही क्यों था।
तुझको मालूम नहीं व्दार से हर शायर के
रोशनी आँख बचा कर ही गुज़र आती है,
उसकी दुनियाँ है अंधेरे से घिरी उतनी ही,
दूर से जितनी चमकदार नज़र आती है।
तू ने सोचा कि मेरे गीत की ख़ुशबू छू कर,
फूल तो फूल हैं, काँटे भी महक जाएँगे,
तू ने सोचा कि मेरे प्यार की पी कर मदिरा,
इक शराबी से सभी दर्द बहक जाएँगे।
शायरी रूह की आवाज़ है माना लेकिन
क्या किसी भूख की तड़पन को निगल सकती है,
उसकी गरमी से किसी सर्द रसोई की मगर
एक अरसे से बुझी आग भी जल सकती है?
गंदुमी शाम के रंगीन धुँधलके की तरह,
ख़ूबसूरत है बहुत ज़िन्दगी, मासूम नहीं,
वह मुहब्बत के दिखावे तो बहुत करती है,
पर सचाई का उसे नाम भी मालूम नहीं।
इतनी नादान नहीं है कि किशोरों की तरह,
एक दिलचस्प खिलौने से बहल जाएगी,
वह नहीं है किसी हमदर्द सुराही की शराब
जिस भी प्याले में कहो, शौक़ से ढल जाएगी।
ख़ुदकशी से भी बुरी है ये ज़िन्दगी अपनी,
ख़ाक जीना है कि मरने को तरसते हैं हम।

यों तो शायर हैं, शहँशाह का दिल रखते हैं,
असलियत ये है कि मिट्टी से भी सस्ते हैं हम।
जब कि दुनिया ये नरक से भी गई बीती है,
कल्पना स्वर्ग की आँखों में जगाएँ कब तक,
जब कि होंठों पे उतर आई हैं नीली शिकनें,
हम किसी स्वप्न को आवाज़ लगाएँ कब तक
भूख के धान उगें, दर्द की सरसों फूले,
क्या इसी वास्ते, आँसू से धरा सींची थी,
ऐ मेरी क़ौम के हमदर्द, बता दो इतना,
क्या नए देश की तस्वीर यही खींची थी?
काट ले जाए न अंधियार रोशनी की फ़सल,
अपने हर दर्द को अँगार बना लूँगा मैं,
अपने हर छन्द के हाथों में थमा दूँगा मशाल,
अपने हर गीत को तलवार बना लूँगा मैं!
है ये मुमकिन कि सुबह देख न पाएँ हम-तुम,
पर नई पौध पे छाएगा जवानी का ख़ुमार
शाम से पहले ही कुम्हलाएँ तो परवा क्या है,
कुनमुनाती हुई कलियों पे तो आएगा निखार!
इस से बेहतर तो कोई मौत नहीं हो सकती,
प्यार की राह में लड़ता हुआ मर जाऊँ मैं,
मेरे हाथों में तेरा हाथ रहे आख़िर तक
तुझ को देता हुआ आवाज़ गुज़र जाऊँ मैं!

बालस्वरूप राही : संक्षिप्त परिचय

जन्म एवं स्थान : 16 मई, 1936, तिमारपुर दिल्ली

शिक्षा : एम.ए. (हिन्दी) दिल्ली विश्वविद्यालय

आजीविका : दिल्ली विश्वविद्यालय में हिन्दी विभागाध्यक्ष के साहित्यिक सहायक। ट्यूटर, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय साथ ही 'सरिता' के सम्पादकीय विभाग में अंशकालिक कार्य। 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में उप सम्पादक, सहायक सम्पादक, डिप्टी एडिटर (1960-1978)। 'प्रोव इंडिया' के परिकल्पनाकार तथा प्रबंध संपादक। 'श्री वर्मा' ... के हिन्दी प्रभारी, सचिव, भारतीय ज्ञानपीठ (1982-1990) इस दौरान अनेक महत्वपूर्ण कार्यक्रमों का संयोजन। महाप्रबंधक, हिन्दी भवन, नई दिल्ली।

प्रकाशन : हिन्दी की लगभग सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में अनेकानेक कविताएँ, लेख, व्यंग्य रचनाएँ, नियमित स्तम्भ आदि। 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में लम्बे समय तक चलने वाले स्तम्भ 'गपशय' का लेखन। छः काव्य संकलन। बाल कविताओं का संकलन अंग्रेजी में 'व्हेन वी ग्रो अप'। अनेक भाषाओं में कविताएँ अनूदित। पाठ्यक्रमों तथा प्रतिनिधि संकलनों में संकलित। त्रैयासिक 'प्रगीत' का सम्पादन।

दूरदर्शन को योगदान : लगभग तीस वृत्त चित्रों का निर्माण। 'साँस साँस में' सरगम (पंजाबी लोक गायिका प्रकाश कौर)। 'एक समर्पित व्यक्तित्व (वियोगी हरि), बलिहारी गुरु आपने, अच्छी शिक्षा : सच्ची शिक्षा, लोक कलाकार : सुलतान सिंह, ग़ालिब याद आता है, मूक कलाकार इरफ़ान असकरी, कालजयी महावीर देवगढ़ इत्यादि में निर्देशन,

परिकल्पना एवं आलेख।

टेलीफिल्म : 'सरसों के फूल' शीर्षक गीत, पटकथा एवं संवाद।

धारावाहिक : 'गणदेवता' के लिए सात गीत, नारी एक रूप अनेक (पटकथा तथा संवाद)। 'खेल पुराने बड़े सुहाने, सब हवा है, 'दूसरा कालिदास' की पटकथा, संवाद तथा गीत।

सम्मान : पुरस्कार : उत्तरप्रदेश पुरस्कार, राष्ट्रीय पुरस्कार (एन.सी.ई.आर.टी.) प्रकाशवीर शास्त्री पुरस्कार (समाज कल्याण मंत्रालय) अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

भाषा-ज्ञान : हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी तथा उर्दू।

प्रकाशित कृतियाँ : मोन रूप तुम्हारा दर्पण, जो नितान्त मेरी है, राग विराग (कविता संग्रह) दादी अम्मां मुझे बताओ, हम जब होंगे बड़े, बन्द कटोरी मीठा जल, हम सबसे आगे निकलेंगे, गाल बने गुब्बारे, सूरज का रथ, व्हेन वी ग्रो अप (बाल कविताएँ)।